चन्दामामा
दिसम्बर
50

Photo by A. S. Lakdawala

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

घन-घमण्ड गरजत घोरा !

प्रेषक :
भरतसिंह चौहान-बेंगलोर

चन्दामामा

दिसम्बर १९६०

ENERGY
FOOD

परियों की राजकुमारी

मिन्नी को जब मैं ने नया फ्रॉक पहनाया तो वह तालियां बजा कर नाचने लगी।

बड़े प्यार से मैं ने यह फ्रॉक तैयार किया था—दूधिया सफेद फ्रॉक जिस के बार्डर पर नीले रंग के नन्हें नन्हें फूल...

मिन्नी उछलती कूदती शीशे के सामने गई। वहां उस ने घूम कर चारों ओर

से फ्रॉक को देखा और फिर दूसरे क्षण अपनी सहेलियों को फ्रॉक दिखाने घर से बाहर निकल गई।

मैं ने पुकारा, "मिन्नी, मिन्नी! फ्रॉक उतार दे, मैला हो जायेगा। शाम को शादी पर जाते समय पहनना..."

पर मिन्नी वह गई, वह गई।

मैं ने उसे देखा तो लगा जैसे वह परियों की राजकुमारी हो। बड़ी ही प्यारी लगी वह उस फ्रॉक में।

दिल में तो आया कि मिन्नी को वापस ले आऊँ। फ्रॉक तो मैं ने नाप देखने के लिए ही पहनाया था। लेकिन तभी रसोई में जो भाजी के जलने की महक आई तो उधर दौड़ी और फिर वहां काम में ऐसी फँसी कि होश ही भूल गई।

होश तब आई जब दर्वाजे में अपनी सहेली राधा की आवाज सुनी। इतने अर्से के बाद उसे देख कर चाव चढ़ गया। और अभी हम जा कर ड्राईंगरूम में बैठी ही थी कि सामने क्या देखती हूँ—दर्वाजे में मिन्नी खड़ी है।

देखते ही मेरे तो होश उड़ गये। सारा फ्रॉक गंदा किया हुआ था। अब शाम को शादी पर क्या पहनेगी।

मैं मिन्नी की ओर बढ़ी "सत्यानाश कर दिया है फ्रॉक का। शाम को अब अपना सिर पहनेगी?" और मैं उसे मारने को ही थी कि राधा ने छुड़ाते हुये कहा, "पागल

SIP.3A-50 HI

"हो गई है क्या? बच्ची पर हाथ उठाती है।"

मिन्नी को छुटकारा मिला। उस ने फ्रॉक उतार दिया। फिर मैं फ्रॉक धोने गुसलखाने में गई। फ्रॉक को डंडे से कूट पीट रही थी कि राधा वहां आई, "तो क्या अब मिन्नी की बजाये फ्रॉक को पीट कर अपना गुस्सा ठंडा करेगी?"

"इसे धोऊं न तो शाम को यह पहनेगी क्या? दूसरे फ्रॉक तो इतने अच्छे नहीं हैं।"

"पर पीटती क्यों हो? वह फट जायेगा।"

"तो पीटे बिना साफ कैसे होगा?"

"साफ कैसे होगा? सही किस्म के साबुन से। अब जैसे मैं सनलाइट बरतती हूं..."

"सनलाइट क्या ऐसा बढ़िया साबुन है?"

"हां, सनलाइट से कपड़े बहुत उजले धुलते हैं। यह बिल्कुल शुद्ध होता है। इस लिये इससे कपड़ों को कोई नुकसान नहीं पहुंचता।"

"पर है तो महंगा न?"

"अजीब बात करती हो," राधा हंसी, जरा इस के फायदे तो देखो। इसे जरा सा कपड़ों पर मलो तो इतना झाग देता है कि ढेरों कपड़े देखते देखते सफेद और उजले धुल जाते हैं। कूटने पीटने से एक तो अपनी जान बचती है, दूसरी कपड़ों की। और इस लिये कपड़े पहले से कहीं ज्यादा देर तक टिकते हैं। इस तरह साबुन बचा, मेहनत बची, कपड़े भी बचे। अगर इतनी बच्चत हुई तो यह महंगा कैसे हुआ?"

उसी समय मैं ने सनलाइट की टिकिया मंगवाई और उस से फ्रॉक धोने लगी। साबुन फ्रॉक से जरा सा छुआ था कि झाग ही झाग हो गया। मिनिटों में फ्रॉक धुल कर चमकने लगा। शाम को मिन्नी ने वही फ्रॉक पहना, तो सच कहती हूं, वह बहुत ही प्यारी लगी—परियों की राजकुमारी जैसी। मैंने अंगुली को काजल लगा कर उस के माथे पर छोटा सा निशान लगा दिया कि कहीं नजर न लग जाये।

S/P. 38-50 HI

हिंदुस्तान लीवर लिमिटेड ने बनाया
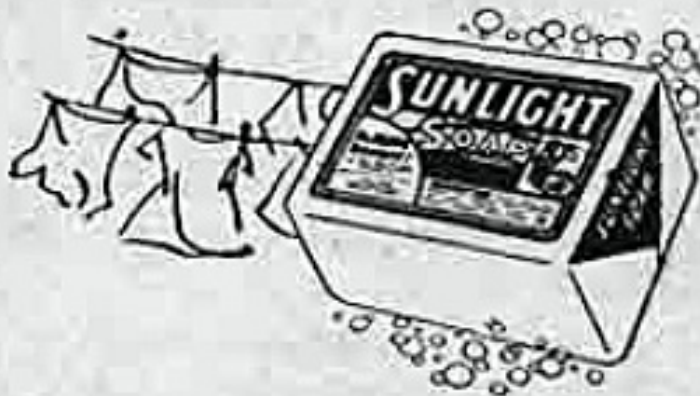
लिटिल्स ओरिएण्टल बाम

पिछत्तर वर्षों
से जुकाम, दर्द
आदि के लिए
विश्वस्त
औषधी

लिटिल्स ओरिएण्टल बाम
एन्ड
फार्मस्यूटिकल्स लिमिटेड,
एक्सप्रेस एस्टेट्स, मद्रास-२,

६०३-५०९

भीनी-भीनी सुगंधवाला यह तेल बालों को काला और चमकीला बनाता है।

आधुनिक विज्ञान और लम्बे अर्से के अनुभव के संयोग से बननेवाला

बहुत ही बारीक खोज-बीन, लम्बे अर्से के अनुभव और आधुनिक विज्ञान का सहारा ले कर लोमा हेअरऑयल तैयार किया जाता है... और यही इसकी उत्तमता का रहस्य है।

सोल डीस्ट्रीब्युटर्स और एक्सपोर्टर्स:
एम. एम. संनातवाला,
अहमदाबाद १.

प्रति सोमवार को रात के ८-३० बजे रेडियो सिलोन पर "लोमा संगीत खजाना" का कार्यक्रम सुनिए।

अब

अपना मनचाहा स्वास्थ्यवर्धक वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड

विटामिन युक्त

लीजिए

अब आप भारत का मनचाहा और स्वास्थ्यप्रद टॉनिक विटामिनयुक्त खरीद सकते हैं। वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड के प्रसिद्ध फार्मूले में स्फूर्तिदायक बहुमूल्य विटामिनों का समावेश किया गया है। यह बीमारी के बाद की कमज़ोरी को दूर कर शरीर में नयी ताकत और स्फूर्ति पैदा करता है। खून साफ़ करना, पट्ठों और ज्ञानतन्तुओं में नया जीवन लाना और शरीर में बीमारी को रोकने की अद्भुत शक्ति पैदा करना यह सब वाटरबरीज़ विटामिन कम्पाउन्ड के विशेष गुण हैं।

वाटरबरीज़ विटामिन कम्पाउन्ड

आपकी खुराक का पूरक।

लाल लेबलवाला क्रियोसोट तथा ग्वायकोलयुक्त वाटरबरीज़ कम्पाउन्ड हर जगह मिलता है जो सर्दी और खाँसी के लिए बेजोड़ है।

जल्दी से
हम
घर चलें!
ज्यों ही स्कूल से छुट्टी मिलती है, त्यों
ही ये बच्चे सीधे अपने घरकी ओर दौड़ पड़ते हैं।
क्योंकि हमेशा उनके घर पर अपने अत्यधिक
मनपसंद साठे बिस्कुट व चॉकलेट उनके लिए तैयार
मिलते हैं। इन्हीं मनपसंद खाद्यों के कारण वे न
सिर्फ अपनी थकावट ही भूलते, बल्कि शाम में खेल
खेलने के लिए अपने में अधिक स्फूर्ति का
अनुभव भी करते है।
साठे
बिस्कुट एण्ड चॉकलेटस्
साठे बिस्कुट एण्ड चॉकलेट कं. लि., पूना-२

पार्ले के ग्लुको बिस्कुट
विटामिनों से भरपूर

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

आपने देखा होगा कि कभी-कभी "चन्दामामा" में ऐसी कहानियाँ प्रकाशित होती हैं, जो भारतीय नहीं होतीं।

हम न केवल हिन्दी की कहानियाँ ही देते हैं, भारत की अन्य भाषाओं की कहानियाँ भी देते हैं। कम से कम, जहाँ तक बाल साहित्य का सम्बन्ध है, हम एक प्रकार का समन्वय करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

यही नहीं, हम संसार के अन्य भाषाओं की भी कहानियाँ देते हैं ताकि हिन्दी भाषी बाल संसार अन्य भाषाओं के बाल साहित्य से परिचित हो सके।

हम कुछ मास से चीन की कहानियाँ दे रहे हैं—हमारे पाठक इन्हें चाव से पढ़ रहे होंगे, हम आशा करते हैं।

वर्ष : १२ दिसम्बर १९६० अंक : ४
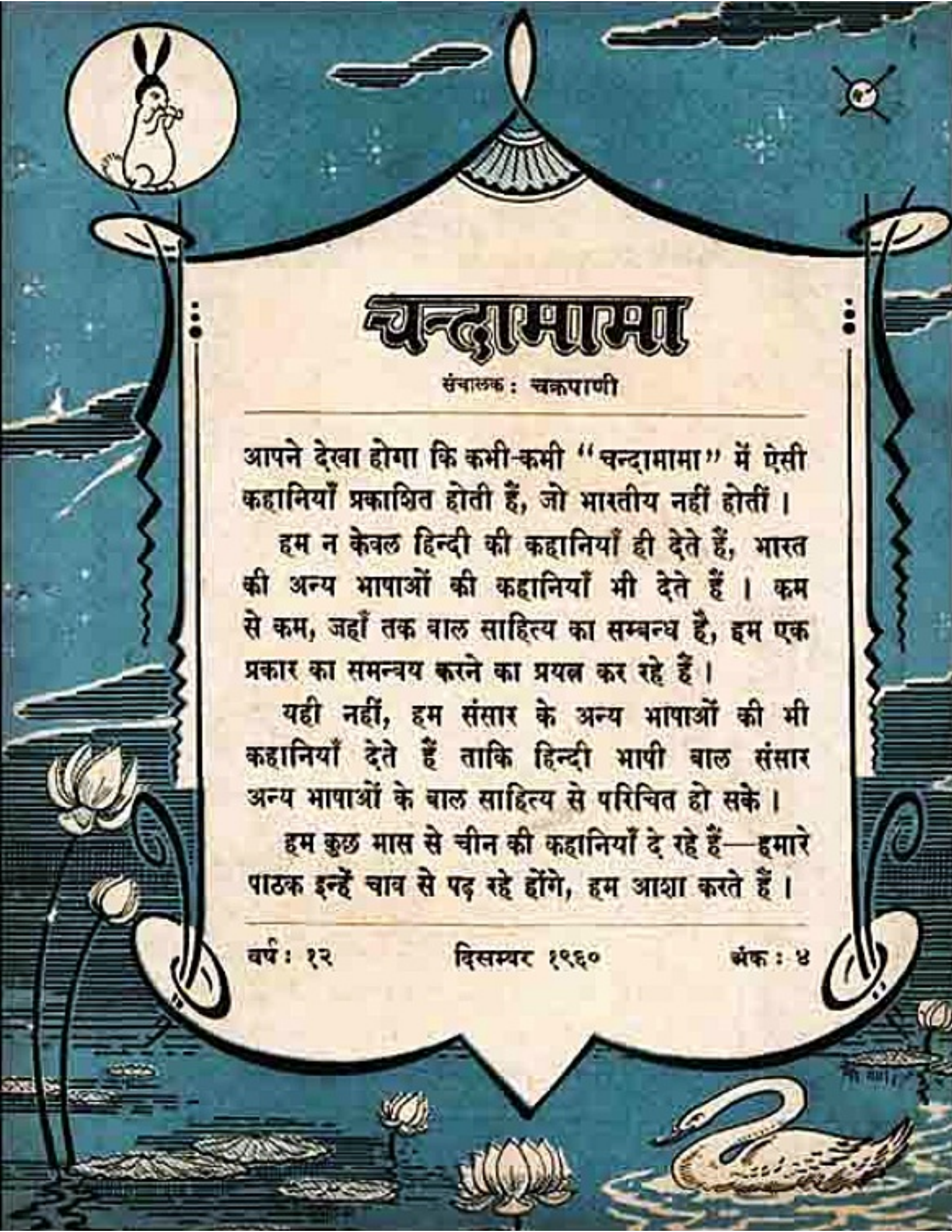
सैन्धव के मरते ही कृष्ण, अर्जुन, भीम ने शंखनाद-सिंहनाद किया।

भीम ने अर्जुन के पास आकर बताया कैसे कर्ण ने उसका अपमान किया था। वह सुन आगबबूला हो उठा। कर्ण के पास आकर कहा—"अरे नीच, भीम का तू अपमान करता है, देखते रहो तेरे सामने ही तेरे लड़के वृषसेन का मार दूँगा। यह प्रतिज्ञा है।"

ये बातें सुनते ही कौरव सेना में हाहाकार मच गया। भयंकर युद्ध शुरु हो गया। थोड़ी देर बाद सूर्य अस्त हो गया। फिर कृष्ण और अर्जुन युद्ध-भूमि से चल दिये। युधिष्ठिर ने उनको आलिंगन करके आनन्दाश्रु बहाये।

और उधर दुर्योधन के शोक की सीमा न थी। इतने योद्धा थे, पर कोई भी सैन्धव को अर्जुन से न बचा सका। अर्जुन ने उस दिन उसकी सात आक्षौहिणी कौरव सेना का नाश किया। भीम उसके इकत्तीस भाइयों को हजम कर गया। उसने द्रोण के पास जाकर कहा—"आचार्य, वह शिखण्डी अब भी जीवित है, जिसने भीष्म जैसे योद्धा को मारा था। वे सब महायोद्धा, जो मुझपर विश्वास करके मेरे लिये लड़ रहे हैं, वे एक-एक करके जा रहे हैं। आप अर्जुन का लिहाज कर रहे हैं, यह सोचकर कि वह आपका शिष्य है। उसी अर्जुन ने मेरी सारी सेना आज नष्ट कर दी है। सैन्धव को मार दिया है। मैं क्योंकि यह न जान पाया था कि कौन मित्र हैं और कौन शत्रु, इसलिए मैंने यह आफ़त अपने सिर पर ले ली।"

इन बातों का द्रोण ने भी उचित उत्तर दिया—"मैंने तुमसे कई बार कहा है

मुख - चित्र

कि अर्जुन को जीतना कोई आसान काम नहीं है। मैं क्योंकि नीच ब्राह्मण हूँ, इसलिए ही मैं अपने पुत्रों के समान पाण्डवों को मारने के लिए तैयार हो गया। वे अच्छे हैं, धार्मिक हैं और सैन्धव की बात कहते हो! उसकी रक्षा के लिए मैंने तुम सबको जो नियुक्त किया था! जब तुम जीवित हो, तो वह कैसे मरा! अर्जुन ने तुम सबको क्यों घेर डाला!"

दुर्योधन ने क्रुद्ध होकर कर्ण से कहा—द्रोण ने जान बूझकर अर्जुन को हमारी सेना में प्रवेश करने दिया था। इसलिए ही सैन्धव की मौत हुई थी। इस द्रोण की बात सुनकर मैंने सैन्धव को घर न जाने दिया और उसको मरने दिया।"

कर्ण ने यह बात स्वीकार न की। "अर्जुन के कौरव सेना में घुसने के लिए द्रोण जिम्मेवार नहीं है, उसका कोई दोष नहीं है।" उसने कहा।

अन्धेरा हुआ। गीदड़ चिल्ला रहे थे, उल्लू भी भयंकर आवाज कर रहे थे। परन्तु सेनायें युद्ध समाप्त करके शिविर में न आयीं। गुस्से में उबलता दुर्योधन पाण्डव सेना में घुस गया और भयंकर युद्ध करने लगा।

द्रोण ने भी युद्ध करके, केकेय और धृष्टद्युम्न के लड़कों को मार दिया। शिबि नाम का व्यक्ति उसके हाथों मारा गया, दोनों पक्षों का जोश और भी बढ़ गया। पाण्डव पक्ष का घटोत्कच और उसके राक्षस जिनका रात के आने के साथ बल बढ़ता जाता था, भीषण युद्ध करने लगे। घटोत्कच का मुकाबला दुर्योधन और कर्ण जैसे योद्धा न कर पाये। वे पीछे हटने लगे।

रात के युद्ध के प्रारम्भ होने के बाद भीम भी गरमा उठा। उसने कलिंग के

लड़के, धृतराष्ट्र के पुत्र और बाल्हिक को मार दिया। पाण्डव योद्धाओं का आक्रमण देख, दुर्योधन ने कर्ण से कहा—"पाण्डवों के आक्रमण को तुम्हें ही रोकना होगा।" तुरत कर्ण ने शेखियाँ मारते हुए कहा—"राजा, तुम फ़िक्र न करो। मुझे इन्द्र ने जो शक्ति दी है, उससे अवश्य इन को मार दूँगा। इन पाण्डव, केकेय, मात्स्य, और पाँचाल को जीतकर, सारी भूमि तुम्हें दे दूँगा। तुम चिन्ता न करो।"

यह सुन कृप ने कहा—"क्यों शेखियाँ मारते हो?" "ये सब बातें कहाँ चली जाती हैं जब तुम अर्जुन से लड़ते हो? काम करनेवाले काम करके दिखाते हैं, तुम्हारी तरह अपनी प्रशंसा नहीं करते।" कर्ण को यह सुन गुस्सा आ गया। उसने और शेखियाँ मारीं और कृप से कहा।

"अरे ब्राह्मण, अप्रिय बातें कहोगे, तो तुम्हारी तल्वार से ही तुम्हारी जीभ काट दूँगा।"

यह सुन अश्वत्थामा तम-तमा उठा—"अरे अधम! तुम मेरे महावीर मामा का अपमान करते हो। तेरा सिर काट दूँगा।" उसने तल्वार उठाई। दुर्योधन ने बड़ी मुश्किल से अश्वत्थामा, कृप और कर्ण को रोका। पाण्डव कर्ण को देखकर उससे युद्ध करने आये। कर्ण ने खूब युद्ध तो किया, पर लड़ते-लड़ते अर्जुन ने उसे रथ से उतरने के लिए बाधित कर दिया।

उसके बाद युद्ध में सात्यकी ने सोमदत्त को मार दिया। अन्धकार खूब बढ़ गया, दुर्योधन ने अपने सेवकों को मशालें जलाने के लिए कहा। कौरव सेना में मशाल दीखते ही पाण्डव सेना ने भी मशालें जलाईं। उनकी रोशनी में युद्ध होने लगा।

अमृत मंथन

क्षीरोदधि के मंथन से फिर
कई अनोखी चीज़ें निकलीं,
चार दाँत का हाथी निकला
जिसकी देह बहुत थी उजली।

कल्पवृक्ष फिर निकला उससे
शाखाओं से रहित मनोहर,
'हमें चाहिए ये दोनों ही'—
कहा इन्द्र ने तब यह हँसकर

बोला दैत्य—"अरे, तुम्हीं लो
हमें न इनकी है दरकार,
डालरहित यह पेड़ और यह
हाथी श्वेत सदा बेकार।"

जारी मंथन रहा पूर्ववत्
लगा दिया था सबने ज़ोर,
मंदर चक्कर रहा काटता
जल में उठती रही हिलोर।

तभी अचानक वहाँ चतुर्दिक
फैला शीतल विमल प्रकाश,
क्षीरोदधि से निकल चाँद ने
बिखराया निज उज्ज्वल हास।

देख चाँद को सब दैत्यों ने
समझा यह अमृत का घट है,
तभी अप्सराओं ने नभ से
कहा—'यही अमृत का घट है।'

दैत्य सभी लपके तत्क्षण ही—
'अरे यही अमृत का घट है,'
बोलीं अप्सरायें फिर हँसकर—
'हाँ, हाँ, यह अमृत का घट है!'

रूप देखकर अप्सराओं का
गये दैत्य सुधि अपनी भूल,
लगे दौड़ने उनके पीछे
बुद्धि हुई उनके प्रतिकूल।

महेशनारायण सिंह

अप्सराओं के पीछे पीछे
गये भागते वे सब दूर,
भार पड़ा तब देवों पर ही
सागरमंथन का भरपूर।

रहे दैत्य सब उधर भटकते
इधर उदधि में उठी तरंग,
लक्ष्मी प्रगट हुई तब उससे
दमक उठा सोने-सा अंग।

महादिग्गजों ने आकर के
लक्ष्मीजी को झट नहलाया,
और वरुण ने आकर उनको
वैजयंती हार पिन्हाया।

रूप मनोहर अति लक्ष्मी का
पद्मासन पर रही विराज,
दिव्य पद्म की माला कर में
अनुपम औ' सुन्दरतम साज।

जिधर जिधर देखा लक्ष्मी ने
आँखें अपनी जरा पसार,
फैल गयी झट उधर उधर ही
ऐश्वर्यों की छटा अपार।

प्रगट हुए उस अवसर पर ही
महाविष्णु तब गरुड़सवार,
उनको ग्रीव में लक्ष्मी ने
डाल दिया पद्मों का हार।

कहा वरुण ने तभी विष्णु से—
'करें भेंट यह भी स्वीकार!'
और दिया तब कौस्तुभ मणि का
उन्हें दिव्य सुन्दर उपहार।

ब्रह्माजी ने खुद ही आकर
किया वेद मंत्रों का गान,
और देवमुनियों ने सारे
भक्ति भाव के गाये गान।

इन्द्रदेव ने विनती की यह—
"माता, हमपर कृपा करो,
स्वर्ग हमारा देकर हमको
ताप शाप का कठिन हरो।"

विनती सुनकर देवराज की
बोली लक्ष्मी वचन सहास—
"चिंता करो न इन्द्र, शीघ्र ही
पूरेगी तुम सबकी आस!"

इतना कहकर लक्ष्मीजी ने
किया विष्णु के उर में वास,
और विष्णु ने भी जाकर तब
क्षीरोदधि में किया निवास।

उसी समय में वहाँ कहीं से
शेषनाग भी सहसा आये,
गये विष्णु के पीछे पीछे
फन हज़ार अपने फैलाये।

उधर अप्सराओं के पीछे
दैत्य दौड़ते थे बेहाल,
देवों ने जब उन्हें पुकारा
हुए क्रोध से वे सब लाल।

फिर भी अमृत की खातिर तो
सागर मथना ही था उनको,
इसीलिए तज अप्सराओं को
पड़ा लौट ही आना उनको।

सागरमंथन पुनः वेग से
किया सभीने जब कुछ काल,
निकले धन्वंतरी अचानक
विमल तेज से दीपित भाल।

स्वर्णकलश अमृत का सुन्दर
लिये हाथ में जब वे आये,
"अमृत निकला! अमृत निकला!!"
कहते दैत्य सभी चिल्लाये।

स्वर्णकलश वह अमृत का झट
दैत्यों ने ही हथियाया,
लगे नाचने लेकर उसको
मन ही मन में बौराया।

स्वर्णकलश को रखकर सिरपर
लगे मचाने वे सब शोर,
छीना-झपटी कर आपस में
लगे दिखाने अपना जोर।

नाच-कूदकर, पीट-पीटकर
जोर-जोर से तालियाँ,
मगन खुशी में लगे छोड़ने
दैत्य सभी किलकारियाँ।

अपना पागल-नृत्यों से वे
भूमंडल को हिला रहे थे,
अपनी भीषण आवाजों को
आसमान से मिला रहे थे।

स्तब्ध खड़े देवों ने आखिर
माँगा जब अमृत का भाग,
गरजे दैत्य तुरत ही उनपर—
"अरे भाग जा, जल्दी भाग!

नहीं एक भी बूँद अमृत की
तुम लोगों को यहाँ मिलेगी,
अगर पास भी आये तो अब
भीषण तुमपर मार पड़ेगी!"

[११]

[यह जानते ही कि द्रोही नागवर्मा किले के पास आ रहा था, चित्रसेन ने अपने सैनिकों को किले में छुपकर रहने के लिए आज्ञा दी। शेर का चमड़ा पहिननेवाले अग्निद्वीप के लोगों के नायक करवीर ने सलाह दी कि पहिले कुछ सैनिकों को किले में भेजकर यह देखना अच्छा था कि क्या होता है। उसके बाद:—]

करवीर की सलाह नागवर्मा को बहुत अच्छी जंची। इसका कारण यही था कि वह भी किले में प्रवेश करने के लिए डर रहा था। नागवर्मा ने एक बार गिरे हुए किले के द्वार की ओर देखा। फिर करवीर की ओर मुड़कर कहा—"अच्छी सलाह है, तो ऐसा ही करेंगे।" फिर उसने झट अपना घोड़ा मोड़ा और सैनिकों से कहा—"तुम निर्भय हो किले में प्रवेश कर सकते हो।" बिना युद्ध के किले को अपने वश में कर लेना हमारे लिए शुभ सूचक है। क्योंकि न्याय और धर्म हमारे साथ हैं इसलिए ही हमें भगवान ने यह अवकाश दिया है।

तुरत सैनिक झुन्डों में गिरे हुए द्वारों से किले में जाने लगे। नागवर्मा और करवीर घोड़ों पर सवार हो, तलवार घुमाते जोर जोर से चिल्ला रहे थे, हाँ

जल्दी चलो दीवारों और बुर्जों की मरम्मत करके हमें युद्ध के लिए तैयार होना होगा। जल्दी ही तारकेश्वर की सेना हमें घेर सकती है।

सारी सेना किले में चली गई। नागवर्मा और करवीर ने थोड़ी देर कान खड़े करके सुना कि कहीं अन्दर से युद्ध ध्वनि तो नहीं आ रही है। जब उनको वह न सुनाई दी, तो उनका हौसला बढ़ा। डर जाता रहा।

"हम व्यर्थ ही डर गये थे। किले में कहीं शत्रु नहीं हैं। अब हमें किले की रक्षा के लिए आवश्यक प्रयत्न करने होंगे।" नागवर्मा ने कहा।

करवीर ने सिर हिलाकर अपनी सहमति प्रकट की। तुरत दोनों घोड़ों पर सवार होकर गिरे हुए द्वारों से अन्दर जाने लगे। वे द्वार पार करके दो चार गज़ आगे गये थे कि सेना में खलबली मच गई। वे जोर जोर से चिल्लाने लगे—"राक्षस, राक्षस" कुछ सैनिक बाहर जाने के लिए भागने लगा।

"महाराज, धोखा दिया गया है, धोखा, हम खड़े होकर उनसे युद्ध नहीं कर सकते। अगर जीवित रहे—तो उनको फिर भी मारा जा सकता है। घोड़ों को पीछे हटाइये।" कह कर करवीर ने अपने घोड़े को झट पीछे मुड़ाया।

"ओह, डरपोक कहीं के!" कहते हुए नागवर्मा ने भी घोड़े को पीछे हटाया और उन्हें मैदान की ओर भगाने लगे।

"द्रोही नागवर्मा भागा जा रहा है, इससे पहिले कि वह जंगल में घुस सके, उसे पकड़ लिया जाय।" चित्रसेन की ये बातें नागवर्मा को सुनाई दीं। तुरत अट्टहास करते राक्षस पत्थरों की गदा

घुमाते-घुमाते, नागवर्मा और करवीर के घोड़ों की ओर भागने लगे।

"राक्षस यह जानकर कि वे हमें जीवित न पकड़ सकेंगे, हमें मारने के लिए पत्थरों की गदा फेंक रहे हैं। महाराज, हमारे लिए जल्दी ही जंगल में पहुँच जाना अच्छा है।" करवीर ने भयभीत हो काँपते हुए कहा—"कितना धोखा, कितना धोखा।" नागवर्मा पागल की तरह चिल्लाता और जोर से जंगल की ओर घोड़े को भगाने लगा। इतने में उग्राक्ष की फेंकी हुई गदा बगल में दौड़ते हुए करवीर के घोड़े को जोर से लगी। घोड़ा हिनहिनाया और धड़ाम से आगे गिर पड़ा। करवीर के हाथ से लगाम खिसक गई। चिल्लाता, तिलमिलाता, तड़पता वह गेंद की तरह जा गिरा।

करवीर का चिल्लाना सुन नागवर्मा ने घोड़ा रोककर पीछे मुड़कर देखा, उग्राक्ष की गदा की चोट से घोड़े की दोनों पिछली टाँगें टूट गई थीं, वह उठ न सका। करवीर का घोड़ा जमीन पर इधर उधर लुढ़क रहा था। थोड़ी दूर पर गिरा करवीर इतने में धनुष बाण लेकर खड़ा हुआ—

"महाराज, महाराज!" चिल्लाता नागवर्मा के पास भागा भागा आया।

"हमारे लिए यहाँ समय गंवाना बड़ा खतरनाक है, हमारी सारी सेना, लगता है किले में नष्ट कर दी गई है। जो मर मराकर बच रहे हैं, वे हमारी ओर भागे-भागे आ रहे हैं।" नागवर्मा ने किले की ओर देखते हुए कहा।

करवीर ने भी सिर मोड़कर उस तरफ़ देखा। कुछ सैनिक हो-हल्ला करते जंगल की ओर भागे आ रहे थे। उसने उनके पीछे कुछ राक्षस और चित्रसेन के सैनिकों का आना भी देखा।

सोच कि हम ही हैं, उनका पीछा करेंगे। वह मौका देख हम कहीं और भाग सकते हैं।" करवीर ने कहा।

करवीर की सलाह नागवर्मा को बहुत बढ़िया लगी। वह तुरत घोड़े पर से उतर गया। पास आते हुए दो सैनिकों को घोड़े पर सवार होने के लिए हुक्म दिया। उनके सिरों पर करवीर का और अपना शिरस्त्राण रखा—"अरे, तुम बिना पीछे देखे भागते जाओ, वह देखो राक्षस और चित्रसेन के सैनिक आ रहे है।" कहकर उसने तलवार की म्यान से घोड़े को इधर उधर भोंका।

"करवीर, क्या हम शत्रुओं से बचकर भाग निकल सकेंगे? तुम तो घोड़ा भी खो बैठे हो।" नागवर्मा ने चिन्तित होकर कहा।

"हम घोड़ों पर सवार होकर न भाग सकेंगे। महाराज, शत्रुओं ने हम दोनों को पकड़ने के लिए ही यह चाल चली है। इसलिए हमें उनका ध्यान कहीं और बँटवाना होगा। इन भागते आते हुए सैनिकों को घोड़े पर सवार होने के लिए कहिये और कहिये कि जंगल में चाहे जहाँ वे जा सकते हैं। शत्रु उनको देखकर यह

घोड़ा चोट खाते ही हिनहिनाता जंगल में भागने लगा। नागवर्मा जोर से हँसा। उसने करवीर से कहा—"करवीर, अब बताओ हमें किस ओर भागना है।"

करवीर ने चित्रसेन की सेना की टुकड़ियों की ओर देखा। कुछ ने उस घोड़े को, जिस पर नागवर्मा के सैनिक भागे जा रहे थे, देखकर कहा—"देखो, नागवर्मा और उसका मित्र करवीर घोड़े पर सवार होकर भागे जा रहे हैं। पकड़ो।" वे चिलाये।
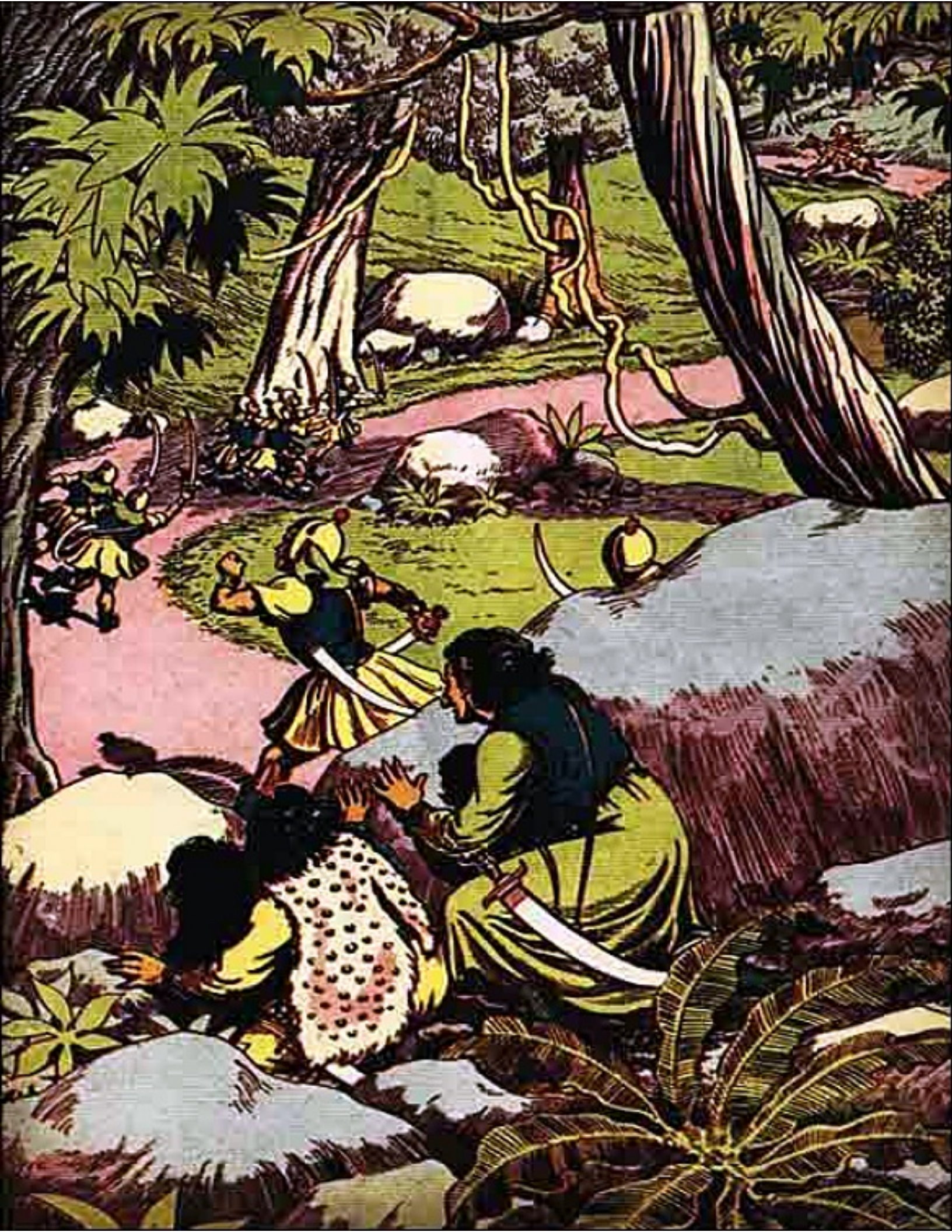
उनका यह चिल्लाना सुन करवीर ने मुस्कराकर कहा—"हमारी चाल चल गई है। महाराज, अब हम पश्चिम दिशा की ओर भाग सकते हैं।"

फिर नागवर्मा और करवीर पेड़-पौधों के पीछे छुपते-छुपाते चित्रसेन के सैनिकों की नज़र बचाकर, धीमे-धीमे घने जंगल में चले गये।

चित्रसेन और उमाक्ष किले के द्वार पर खड़े होकर, सैनिकों द्वारा पकड़कर लाये गये शत्रु सैनिकों से उनके नायक के बारे में पूछताछ करने लगे। शत्रु सैनिक न जानते थे कि नागवर्मा और करवीर उनकी आँखों में धूल झोंक कर सुरक्षित जंगल में चले गये थे। घोड़े पर सवार हो शत्रु सैनिकों को भागता देख चित्रसेन के सैनिकों को भ्रम हुआ कि वे ही नागवर्मा और करवीर थे—कुछ देर उन्होंने उनका पीछा किया। फिर वापिस आकर चित्रसेन से कहा कि वे कहीं जंगल में ग़ायब हो गये थे।

"यानि, मतलब यह कि वह द्रोही नागवर्मा हमारे हाथ से निकल कर भाग गया है।" चित्रसेन ने निराश होकर कहा।

"महाराज, उस नागवर्मा को और उसके साथ के शेर का चमड़ा पहिननेवाले करवीर को पकड़ने की जिम्मेवारी मुझ पर छोड़िये। अभी अपने सारे सैनिकों को जंगल छानने के लिए भेजता हूँ।" उमाक्ष ने कहा। उसकी आज्ञा पाते ही कुछ राक्षस हाथ में आये हथियार को लेकर जंगल में चारों ओर भागे।

इसके कुछ देर बाद—चित्रसेन का भेजा हुआ सेनापति, जो उसके पिता की सहायता के लिए गया था, आया और

उसके पीछे तारकेश्वर भी अपनी सेना के साथ आया। यह जानकर उसके लड़के ने बिना किसी की सहायता से कपिलपुर के किले को वश में कर लिया था, तारकेश्वर महाराज बहुत प्रसन्न हुआ। पर यह देख कि नागवर्मा प्राण बचाकर भाग निकला था, उसे निराशा भी हुई।

"उस द्रोही का जीवित रहना, कभी भी हमारे लिए आपत्ति का कारण हो सकता है। क्योंकि उसका अग्निद्वीप के शेर का चमड़ा पहिननेवालों से स्नेह सम्बन्ध है, इसलिए वह हम पर आक्रमण करने का अवश्य प्रयत्न करेगा।" उसने कहा।

यह भय वहाँ उपस्थित सभी लोगों में था। सबको यही आशा थी कि उग्राक्ष के सेवक खोज खाजकर उनको ज़रूर पकड़कर लायेंगे।

चित्रसेन ने अपने पिता का, कपिलपुर के राजा, बीरसिंह से परिचय कराया। बीरसिंह ने तारकेश्वर को बताया कि कैसे चित्रसेन ने उनकी सहायता की थी। फिर उसने कहा—"अब मैंने राज्यभार का त्याग करने का निश्चय किया है। मेरे कोई पुत्र नहीं है। मेरी एक ही एक लड़की है। मैं उसका आपके पुत्र के साथ विवाह कर देना चाहता हूँ।"

तारकेश्वर ने उससे पहिले ही राजकुमारी कान्तिमति को देखा था। सैनिकों के सम्भाषण से वह जान गया था कि चित्रसेन उससे प्रेम भी करता था। एक ही साथ उसका लड़का अपनी प्रेमिका से विवाह ही न कर रहा था, बल्कि उसका राज्य भी दुगना कर रहा था। इस कारण तारकेश्वर ने चित्रसेन और कान्तिमति के विवाह के लिए अनुमति व्यक्त की।

जल्दी ही विवाह का सुमुहूर्त निश्चित किया गया। विवाह के दिन चित्रसेन ने

सैनिकों और सेनापतियों को ईनाम दिये। उसने मुख्य रूप से उग्राक्ष को कोई बहुमूल्य पुरस्कार देने की सोची।

"उग्राक्ष! जो सहायता तुमने की है, वह अमूल्य है। मैं और कान्तिमति तुम्हारे बड़े कृतज्ञ हैं। इस विवाह के अवसर पर जो तुम माँगोगे, वह मैं देने के लिए तैयार हूँ।" चित्रसेन ने कहा।

"महाराज, आप एक बार और सोचकर वचन दीजिये। मैं जो माँगूगा, शायद उससे आपको कष्ट हो सकता है।" उग्राक्ष ने कहा।

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं—माँगो" चित्रसेन ने कहा।

"महाराज, मेरी पहिले यह इच्छा थी कि जब आपके लड़का पैदा हो और जब वह अट्ठारह वर्ष का हो जाये, वह मुझे दे दिया जाये। मगर कई कारणों से मैंने अपनी इच्छा बदल ली है। अब इच्छा यह है कि आप अपनी पहिली सन्तान चाहे वह लड़की हो या लड़का, उसके पाँच वर्ष के होते ही मुझे दे दो।" उग्राक्ष ने कहा।

यह इच्छा सुनते ही चित्रसेन स्तम्भित-सा रह गया। पर उसे इतने में एक विचार सूझा। जब प्रथम सन्तान को राक्षसों को देना ही है, तो वह अट्ठारवें साल का हो, या पाँच साल का इसमें क्या फर्क पड़ता है!"

"उग्राक्ष, तुम्हारी इच्छा के अनुसार ही होगा।" चित्रसेन ने कहा।

चित्रसेन की बात सुनकर उग्राक्ष फूला न समाया। उसने प्रणाम करके कहा—"महाराज, मैं हमेशा आपका कृतज्ञ रहूँगा।" फिर वह सैनिकों की ओर मुड़कर गरजा—"अरे सेवको, सब हो न यहीं।"

(अभी है)

अपराध का पुरस्कार

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। वह फिर शव के पास गया। कन्धे पर शव रखकर, वह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा— "राजा, जो काम तुमने लिया, उसको निभाने के लिए तुम इतनी निष्ठा दिखा रहे हो। मुझे यह नहीं मालूम हो रहा है कि तुम्हें इस निष्ठा के लिए प्रेरणा कहाँ से मिल रही है, साधारणतया जो अन्तरात्मा के द्वारा प्रेरित होते हैं, वे असाधारण निष्ठा दिखाते हैं। पर उनमें भी कई, रामभद्र की तरह अपनी निष्ठा आदि भूल बैठते हैं। पर तुम अपनी निष्ठा छोड़ते नहीं लगते, तुम्हें थकान न मालूम हो, इसलिए रामभद्र की कहानी सुनाता हूँ। सुनो," उसने यों कहानी सुनानी शुरू की।

अयोध्या में रामभद्र नाम का एक क्षत्रिय युवक रहा करता था। उसकी आजीविका

बेताल कथाएँ

का कोई आधार न था। इसलिए वह कहीं न कहीं नौकरी किया करता। पर नौकरी में भी कोई स्थिरता न थी। दारिद्रय उसका पीछा न छोड़ता था।

ऐसी हालत में रामभद्र को एक जगह काम मिला। अयोध्या के पास ही एक वृद्ध क्षत्रिय रहा करता था। उसका नाम निरूपाक्ष था। वह बहुत सम्पन्न था, परन्तु वार्धक्य में वह सूख कर ठूँठ-सा हो गया था। उसके एक लड़का था और वह भी मर गया था। कोई निकट बन्धु न था। वह एकाकी था।

यह निरूपाक्ष बहुत दिनों से बीमार रहता आया था। रात दिन उसकी उपचर्या करने के लिए एक आदमी की ज़रूरत थी। उपचर्या करनेवाले को घर में तो रखा ही जाता, उसको अच्छा वेतन भी दिया जाता।

रामभद्र के लिए यह अच्छी नौकरी थी। परन्तु निरूपाक्ष बड़ा क्रोधी था। रामभद्र ने सुन रखा था कि उसके यहाँ एक दिन काम करना भी बहुत कठिन था, जब से वह बीमार पड़ा था, कितने ही उसके पास काम करने आये थे और चले गये थे। वह इतना डाँटता फटकारता था कि नौकर तक उसे सह न पाते थे।

"यूँ तो बीमार हैं ही, तिस पर बूढ़े हैं। अगर मैंने सब्र से काम लिया, तो वह मुझे कुछ न कहेंगे।" सोचकर रामभद्र, निरूपाक्ष की सेवा करने के लिए मान गया।

पर शीघ्र ही रामभद्र जान गया कि वह काम किसी मनुष्य के लिए सम्भव न था। निरूपाक्ष बड़ा दुराचारी था। वह गुस्से में पागल-सा हो जाता था। अगर सेवा शुश्रुषा में कुछ भी कमी होती तो ऊँटपटांग

गालियाँ देता। हाथ में जो होता, उसे दे मारता।

वह रामभद्र को किसी न किसी बहाने दिन-भर डाँटता दुत्कारता, कई बार तो डंडा लेकर भी मारता। उसे मनुष्य तक न मानता। बड़ी क्रूरता से राक्षस की तरह पेश आता।

एक दिन, जब मालिक ने उसे खूब पीटा, तो वह अपने काम से तंग आ गया और जाने के लिए अपनी चीज़ें सम्भालने लगा। तब निरूपाक्ष ने उसे मनाते हुए कहा—"क्यों इस तरह नाराज होते हो? जाओ मत। मैं बहुत दिन जीवित न रहूँगा। अगर मृत्यु तक मेरी तुमने देखभाल न की, तो मैं अनाथ की मौत मरूँगा।"

रामभद्र को दया आई। उसने अपना निश्चय बदल लिया। परन्तु निरूपाक्ष में कोई भी परिवर्तन न हुआ। उसकी डाँट फटकार, गालियाँ और भी बढ़ गईं।

ग्राम के बड़े बुज़ुर्ग कभी कभी निरूपाक्ष को देखने आते, उससे इधर उधर की बातें करते, जाते समय रामभद्र से कहते—"बेटा, उस बूढ़े की होशियारी से सेवा करना, कुछ दिन ही तो रहेगा। तुम और नौकरों की अपेक्षा अच्छे और सयाने मालूम होते हो।"

कभी कभी वैद्य आता। बीमार को देखता। दवा दारु करता, रामभद्र को बताता कि किस दवाई को कब देना था।

बाकी समय—सिवाय मालिक के अत्याचार के सहने के और कुछ काम न था। स्वतन्त्रता किसको कहते हैं, वह करीब करीब भूल गया था। उसे ऐसा लगता जैसे किसी राक्षस की गुफ़ा में वह कैदी बना लिया गया हो।

इन्हीं कष्टों में एक वर्ष बीत गया। अयोध्या नगर जाने की रामभद्र की इच्छा दिन प्रति दिन उत्कट होती गई। निरूपाक्ष उस पर तरह तरह के जुल्म ढा रहा था। यही नहीं उसके वेतन के पाँच सौ वराह मालिक के पास ही थे। उन वराहों को लेकर वह कितने ही मजे कर सकता था।

जो बड़े बुजुर्ग निरूपाक्ष के घर आया करते थे उनसे रामभद्र कभी कभी कहा करता—"मैं जाने की सोच रहा हूँ। बाबू की सेवा के लिए किसी और को ढूँढ़िये।"

"अरे भाई, बरसात खतम होने तक ज़रा सब्र से काम लो। इतने दिन तो रहे ही हो, कुछ दिन और रह लो। जैसे तैसे तीन महीने काट दो, फिर किसी और को रख लेंगे।" निरूपाक्ष के मित्र कहा करते।

रामभद्र मान गया। पर रोज़ ब रोज़ उसकी मुसीबतें बढ़ती गईं। निरूपाक्ष की सेवा शुश्रुषा करता वह दुर्बल होता जा रहा था। उसके ख्याल भी बदल गये थे। उसको देखकर न वह उसका आदर कर पाता था, न दया ही दिखा पाता था।

उसे इसका भी सन्तोष न था कि उसको अच्छा वेतन मिल रहा था। उसे हमेशा यही चिन्ता सताती रहती कि कब निरूपाक्ष को छोड़कर जाये।

आखिर वह अपना जमा जमाया वेतन तक छोड़कर किसी दिन रात को बिना किसी को कहे जाने को तैयार हो गया। पर इतने में एक बात हुई। एक दिन निरूपाक्ष ने ग्रामाधिकारी को बुलाकर उसको एक पर्चा दिया। वह उसका वसीयतनामा था। उसकी मृत्यु के बाद किसको उसकी सम्पत्ति मिले उस वसीयतनामे में लिखा था।

जब उसको यह मालूम हुआ तो रामभद्र ने सोचा कि यह बूढ़ा अधिक दिन जीवित न रहेगा। इतने दिन इसके यहाँ इतनी मुसीबतें झेलने के बाद यदि मैं अब चला गया तो लोग क्या कहेंगे? कुछ दिन और रह जाऊँगा।

थोड़े दिन और गुज़र गये। निरूपाक्ष की सेवा शुश्रुषा में रामभद्र की नींद भी गुम हो गई थी। रात के समय दवा देनी होती। यही नहीं, जब कभी रामभद्र बैठा बैठा कभी कभी ऊँघने लगता तो बूढ़ा किसी न किसी बहाने उसे उठा देता।

एक दिन रात को ऐसा हुआ कि मालिक ने आवाज़ दी, पर रामभद्र उठा नहीं। निरूपाक्ष लाल पीला हो उठा। उसने पास में रखा लोटा उठाया और रामभद्र के सिर की ओर फेंका।

रामभद्र ऊँघता ऊँघता तपाक से उठा। एक क्षण न उसको सिर पर लगे चोट का भान हुआ, न यह ही मालूम हुआ कि उसका मुँह खून से लथपथ हो गया था। उसको मालिक का डाँटना फटकारना सुनाई दिया। रामभद्र आग बबूला हो उठा। वह झट उठा और निरूपाक्ष के पास जाकर उसने उसका मुँह दोनों हाथों से बन्द कर दिया। निरूपाक्ष कुछ देर तड़पा फिर निश्चल-सा हो गया।

रामभद्र तुरत न जान सका कि उसका मालिक मर गया था। जब मालूम हुआ तो वह पाँच दस को बुला लाया। थोड़ी देर बाद वैद्य भी आया—"उसे तो कभी का चला जाना चाहिए था। मज़बूत था, इसलिए इतने दिन ज़िन्दा रह गया।" सब ने कहा।

किसी ने भी सन्देह न किया कि रामभद्र ने उसकी हत्या की थी। पर वह

पश्चात्ताप में पिघला-सा जाता था। उसका शोक देख सब ने सोचा कि वह उसकी स्वामिभक्ति ही थी।

ग्रामाधिकारी ने बड़े बुजुर्गों के सामने निरूपाक्ष का वसीयतनामा पढ़ा। निरूपाक्ष ने अपनी सारी सम्पत्ति रामभद्र के नाम लिख दी थी, यह पता लगते ही रामभद्र का शोक और पश्चत्ताप और भी बढ़ गया। उसने निरूपाक्ष की दी हुई दमड़ी भी न छूने का निश्चय किया। अगर मैं यह कहूँगा कि मुझे यह सम्पत्ति नहीं चाहिए तो सब कारण पूछेंगे, सबको हत्या के बारे में मालूम हो जायेगा, इसलिए उसने निरूपाक्ष की सम्पत्ति लेकर, चुपचाप गरीबों को देने की, पुण्य कार्यों पर खर्च करने की ठानी।

उसको इतनी सम्पत्ति मिलने पर गाँव में किसी को उस पर ईर्ष्या न हुई। "यह रामभद्र आदमी नहीं देवता है, नहीं तो इस क्रूर की और कोई क्यों इतनी सेवा करता! बड़ा अत्याचारी था, निरा राक्षस था। उस जैसे के पास ही रामभद्र जैसा ही इतने दिन रह पाया। यह किसी और के बस की बात न थी।" सब ने रामभद्र की प्रशंसा की।

जब और मालिक को बुरा भला कह रहे थे, तब भी रामभद्र ने अपने मालिक की प्रशंसा की। "उनकी बात ज़रूर कड़वी थी, पर उनका दिल बहुत अच्छा था।" वह कहा करता।

कुछ दिन बाद रामभद्र का मन बिल्कुल बदल गया। उसने यूँ ही मिली हुई सम्पत्ति को दान धर्म में खर्च करने का ख्याल छोड़ दिया। विवाह करके पत्नी और बाल बच्चों के साथ वह सुख से रहने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा— "राजा, क्यों रामभद्र ने, जो हत्या के लिए पछता रहा था, अपना ख्याल बदल लिया था? क्या उसने सोचा था कि जो वह कर रहा था, वह ठीक था? नहीं तो क्या धन के मोह ने उसकी अन्तरात्मा को चुप कर दिया था? यदि इन प्रश्नों का उत्तर तुमने जान बूझकर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

इस पर विक्रमार्क ने कहा—"रामभद्र ने सोच साच कर हत्या न की थी। निरूपाक्ष की सेवा में उसकी बुद्धि उसके वश में न रह गई थी। पर उसकी अन्तरात्मा ने निर्णय दे दिया था कि उसने हत्या की थी इसलिए उसको पश्चाताप हुआ। परन्तु अन्तरात्मा के निर्णय से भी बड़ा लोक-निर्णय है। दुनियाँ ने उसको सज्जन बताया। इसलिए अन्तरात्मा का निर्णय ठुकरा दिया गया। रामभद्र को फिर मनःशान्ति मिली और वह साधारण व्यक्ति की तरह जीवन व्यापन करने लगा।"

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

रत्नावली

सिंहल देश के राजा विक्रमबाहु की रत्नावली नाम की एक लड़की थी। यौगन्धराय को एक सिद्ध द्वारा यह पता लगा कि उससे विवाह करनेवाला सम्राट होगा। यौगन्धराय वत्स के राजा उदयन महाराजा का मन्त्री था और उनका श्रेयोभिलाषी भी था। इसलिए उसने सिंहल के राजा के पास खबर भिजवाई— "आप अपनी लड़की का उदयन महाराजा से विवाह कीजिये।" परन्तु सिंहल का राजा, उदयन महाराजा की पत्नी वासवदत्ता का चाचा था। यह सोच कि यदि रत्नावली का विवाह उदयन से किया गया तो वासवदत्ता को दुख होगा, उसने यौगन्धराय की इच्छा का आदर न किया।

परन्तु कुछ दिनों बाद सिंहल एक उड़ती उड़ती खबर पहुँची कि वासवदत्ता लावणक में अग्निहोत्र में जलकर मर गई थी। तुरत सिंहल का राजा उदयन से अपनी लड़की की शादी करने के लिए मान गया। उसने अपनी लड़की और अपने मन्त्री वसुभूति और यौगन्धराय के दूत को एक नौका में कौशाम्बी नगर भेजा।

नौका अभी समुद्र में थी कि बड़ा तूफ़ान उमड़ा और नौका टुकड़े टुकड़े हो गई। सौभाग्य से रत्नावली को एक तख्त मिल गया। उसकी सहायता से उसने अपने प्राणों की रक्षा की। समुद्र यात्रा करते हुए कौशाम्बी नगर के एक व्यापारी ने रत्नावली को उस स्थिति में पाया। उसने उसको ले जाकर यौगन्धराय को सौंप दिया।

यौगन्धराय ने जब रत्नावली का विवाह महाराजा से करने की सोची थी, तब उसने

रमेश

महाराजा की अनुमति न ली थी। इसलिए उसने रत्नावली का नाम बदलकर सागरिका रखा और वासवदत्ता के यहाँ परिचारिका के रूप में उसको नियुक्त कर दिया।

वसन्तोत्सव आया। सब उत्सव में मस्त थे। रानी वासवदत्ता मकरन्दोद्यान में, रक्ताशोक वृक्ष के पास अपनी सहेलियों के साथ मन्मथ की पूजा कर रही थी। उदयन अपने विदूषक मित्र वसन्तक को लेकर यह देखने निकला।
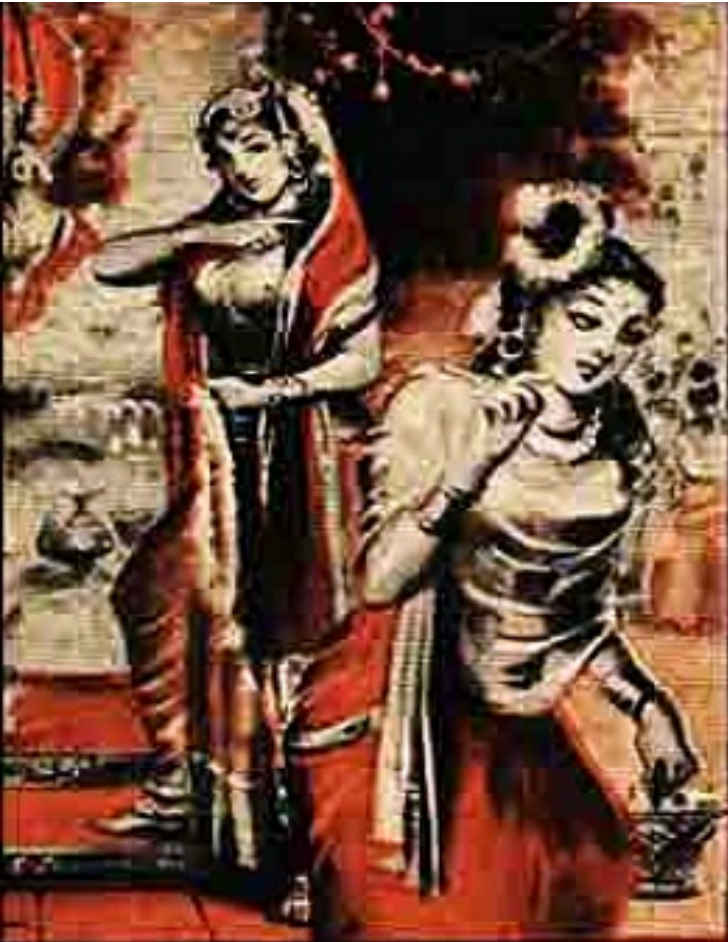
वासवदत्ता, सागरिका को मन्मथ पूजा के स्थल पर देख घबराई। क्योंकि उसने अपनी परिचारिका को पति की नजर में नहीं पड़ने दिया था। उसने सागरिका से पूछा—"सागरिका! तुम भी अभी यहीं हो! और सब तो मस्त हैं, तुम ही जाकर तोते को देखो। पूजा द्रव्य काँचनमाला सम्भाल लेगी।"

सागरिका निराश हो गई। उसने यह देखना चाहा था कि इस देश में मन्मथ की पूजा कैसे होती है। देवी की आज्ञा हुई थी, इसलिए वह वहाँ से चली। पर आड़ में पूजा के लिए फूल तोड़ने लगी। उसने जैसे भी हो मन्मथ की पूजा करने की ठानी।

वह फूल तोड़ रही थी कि उदयन और वसन्तक वहाँ आये। वासवदत्ता मन्मथ की पूजा समाप्त कर पति की पूजा करने लगी। फूल तोड़कर सागरिका एक पेड़ के पीछे खड़ी हो गई। उसने देखा कि वासवदत्ता, उदयन की पूजा कर रही थी।

उदयन का सौन्दर्य देख सागरिका मुग्ध हो गई। उसने मन ही मन सोचा—लगता है, इस देश में मन्मथ स्वयं आकर अपनी पूजा करवा रहा है। वह डर रही थी कि कोई उसे वहाँ देख न ले।

वह वहाँ से न जा सकती थी। उदयन को देखती जाती थी, पर देखती अघाती न थी।

सागरिका के हृदय में उस दिन से उदयन ही उदयन था। वह वन में जाकर वहाँ जाकर चित्र पट्ट पर उदयन के सौन्दर्य को चित्रित करने लगी। इतने में तोते के पिंजड़े को पकड़कर सुसंगत नाम की सहेली वहाँ आई। सागरिका ने वह चित्र छुपाना चाहा पर वह छुपा न सकी।

सुसंगत ने उदयन को चित्र में पहिचान लिया था। फिर भी उसने पूछा—"सागरिका यह कौन है?"

"मन्मथ" सागरिका ने कहा।

"जब तक इसके बगल में रति का चित्र नहीं बनता, यह चित्र पूर्ण न होगा। वह काम मैं कर देती हूँ।" कहकर सुसंगत ने उदयन के बगल में सागरिका का चित्र बनाया।

"यह क्या मेरा चित्र बना रही हो?" सागरिका ने पूछा।

"तूने जैसे मन्मथ का चित्र बनाया है, वैसे ही मैंने रति का चित्र बनाया है। इसमें गलती ही क्या है?" सुसंगत ने कहा।

सुसंगत उसको पसन्द थी। उसका रहस्य उसको थोड़ा बहुत मालूम ही हो गया था। इसलिए उसने बाकी जो था, वह भी बता दिया। उसने बताया कि वह राजा से प्रेम कर रही थी।

इतने में शोर सुनाई दिया। उन्होंने सोचा कि कोई बन्दर जंज़ीर तोड़कर उस तरफ चला आ रहा था। वे दोनों पेड़ों के पीछे छुप गईं। इस गड़बड़ी में तोता पिंजड़े से निकल गया। सुसंगत और सागरिका उसको ढूँढने चली गईं।

उसी समय राजा और वसन्तक उस तरफ आये। उनके रास्ते में, एक पेड़ पर तोता, उससे पहिले, जिन स्त्रियों का

सम्भाषण सुना था, वह दुहरा रहा था। उसका कहना सुन राजा ने यह अर्थ निकाला कि एक सुन्दरी ने अपने प्रेमी का चित्र बनाया था। जब पूछा गया कि वह कौन था उसने अपनी सहेली को बताया कि वह मन्मथ था। उसके बाद उस सहेली ने पहिली लड़की का चित्र बनाकर बताया कि वह रति थी। यह सुन बसन्तक ने ताली पीटी तो तोता उड़ गया।

अगर बसन्तक तोते को न भगा देता, तो न मालूम वह क्या बताती। यह सोचते हुए राजा ने कदलीगृह में प्रवेश कर चित्र पट्ट देखा। उसने उसमें अपने चित्र के साथ एक ऐसी असाधारण स्त्री का, जिसको उसने कभी न देखा था, चित्र देखकर, उसकी खूब प्रशंसा की।

इस बीच सुसंगत और सागरिका जब कदलीवन की ओर आईं तो राजा की बातें सुनकर वे मन ही मन बहुत खुश हुईं।

"चित्र पट्ट उनके पास है, जाकर ले लो, उसी के लिए तो फिर आयी हो।" सुसंगत ने कहा। परन्तु सागरिका राजा के सामने जाने में शर्मायी।

सुसंगत ने जाकर राजा से चित्र पट्ट माँगा। राजा ने बातें बदलनी चाहीं—"मैंने आपकी सारी बातें सुन ली हैं। मैं सब जान गयी हूँ। चित्रपट्ट न दिया तो मैं देवी जी के पास जाकर सब कह दूँगी।" सुसंगत ने कहा।

"अरे नाराज मत हो। मैंने तो यूँही कहा था, यह लो, एक आभूषण लो।" राजा ने कहा।

"मैंने भी यूँही डराया था। मुझे आभूषण नहीं चाहिये। नाराज जो हुई है, वह सागरिका आड़ में है। उसे जाकर मनाइये।" सुसंगत ने कहा।

"कहाँ है! कहाँ है!" कहता राजा सागरिका के पास गया। उसका हाथ पकड़कर उसने अपना प्रेम जताया। इतने में वासवदत्ता अपनी सहेली काँचनमाला के साथ वहाँ आयी। सागरिका और सुसंगत कहीं चली गईं।

दुर्भाग्य से चित्रपट्ट पर वासवदत्ता की दृष्टि पड़ी। उसमें अपने पति का चित्र और सागरिका का चित्र देखा। उसको कुछ सन्देह हुआ और कुछ ईर्ष्या भी। जब उसने पूछा—"आपकी बगल का चित्र किसने बनाया है!" तो राजा ने कहा—"मैंने ही कल्पना करके चित्र बनाया है।"

परन्तु वासवदत्ता को उसकी बात पर विश्वास न हुआ। फिर भी वह पति को बिना कुछ कहे चली गई। इसके बाद वासवदत्ता ने सागरिका पर कई पाबन्दियाँ लगा दीं। राजा सागरिका के प्रेम के कारण तड़पने लगा। बसन्तक ने सागरिका और राजा को मिलाने के लिए एक उपाय सोचा। उसने सुसंगत से कहा कि वह
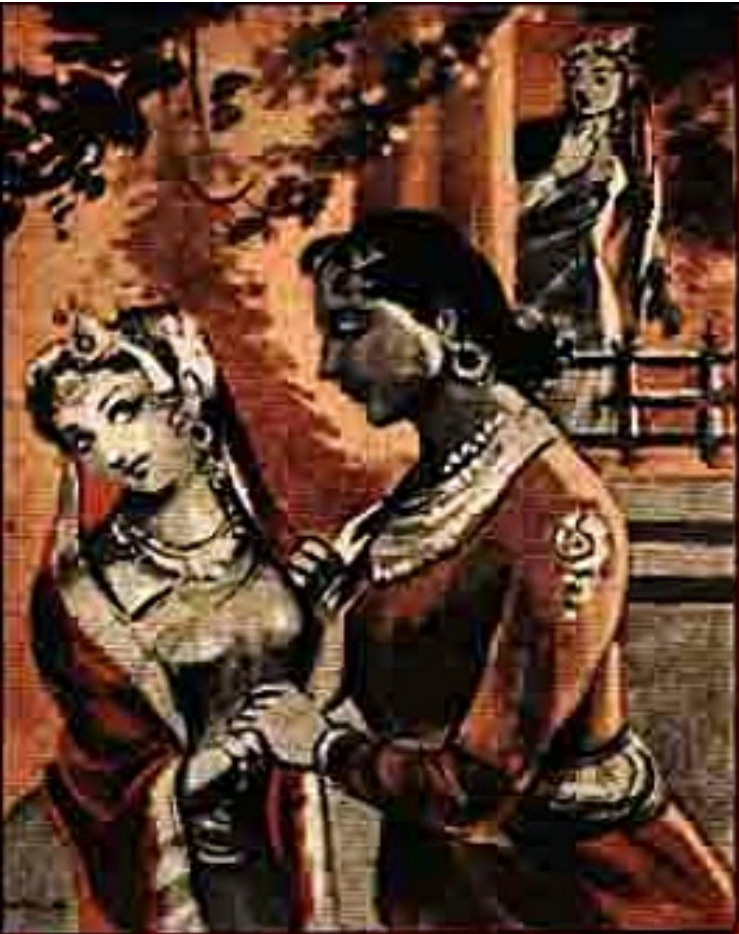
सागरिका को वासवदत्ता के कपड़े पहिनाकर एक दिन शाम के समय माधवीलता-मंडप के पास लाये।

यह बात एक सहेली से वासवदत्ता को भी मालूम हुई। यह बात सच थी या झूट यह जानने के लिए वह शाम के समय माधवीलता के मण्डप के पास गई। राजा ने उसको अन्धेरे में देखकर वासवदत्ता के वस्त्र पहिने सागरिका समझकर अपने प्रेम के बारे में कहा। ये बातें सुन वासवदत्ता को क्रोध आया। उसने परदा हटाकर पूछा— "क्या मैं सागरिका की तरह दीख रही हूँ।"

राजा घबरा गया। वासवदत्ता से उसने कई तरह से माफ़ी माँगी। परन्तु उसका क्रोध न गया। पति को क्षमा किये बगैर वह वहाँ से चली गई। इतने में सागरिका वासवदत्ता के वस्त्र पहिनकर वहाँ आई। उसे देखकर राजा के आनन्द की सीमा न रही।

इतने में वासवदत्ता को अपने पति पर दया आ गई, वह समझौता करने के लिए आ रही थी कि राजा को सागरिका से प्रत्यक्ष प्रेमालाप करते देखा।

यह देख कि उपेक्षा करने से फ़ायदा न था, वासवदत्ता ने सागरिका को अन्तःपुर में बन्द कर दिया और इस बारे में किसी को कुछ न बताया। यह सन्देह करके कि उस पर कोई आपत्ति आनेवाली थी, सागरिका ने अपना रत्नहार सहेली सुसंगत को देकर किसी ब्राह्मण को दान में देने के लिए कहा। सुसंगत ने वह रत्नहार लाकर वसन्तक को दिया।

राजा तो इसी चिन्ता में था कि सागरिका क्या हो गई थी। जब उसने अपने मित्र के गले में वह रत्नहार देखा तो उसका दुख दुगना हो गया।

इतने में मालूम हुआ कि वासवदत्ता के स्वदेश उज्जयनी से सुवर्ण सिद्धि नाम का जादूगर आया हुआ था। जब से सागरिका नहीं दिखाई दे रही थी, तब से राजा को चिन्तित देख वासवदत्ता ने उसके मनोरंजन के लिए जादू के प्रदर्शन का प्रबन्ध किया। जादूगर बड़ा चतुर था। उसने राजा को वासवदत्ता को और दर्शकों को आकाश में ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, देवता और नृत्य करनेवाली अप्सराओं को दिखाकर दर्शकों को आनन्दित और चकित किया। परन्तु इस जादू के प्रदर्शन के समाप्त होने से पहिले ही यौगन्धराय ने राजा के दर्शन के लिए किसी को भेजा। वह और कोई न था, सिवाय सिंहल के मन्त्री वसुभूति और यौगन्धराय द्वारा सिंहल भेजा गया दूत। जब नौका टूटी थी, तो ये भी अपने प्राण बचाकर कुछ देरी से पहुँचे थे।

राजा ने जादूगर से कहा—"तुम अपना प्रदर्शन कुछ देर के लिए रोको।"

"आपका जो हुक्म। एक ही जादू दिखाना बाकी रह गया है। वह बाद में दिखाऊँगा।" कहकर जादूगर कुछ दूर हट गया।

वसुभूति ने वहाँ आते ही वसन्तक के गले में वह रत्नहार देखकर सोचा—"यह तो हमारी राजकुमारी का हार मालूम होता है।" उसने राजा को सब कुछ सुनाया और कहा कि रत्नावली राजा से विवाह करने आ रही थी कि समुद्र में नौका टूट गई और वह डूबकर मर गई।

जब राजा को मालूम हुआ कि यौगन्धराय ने रत्नावली का उसके साथ विवाह करने का प्रयत्न किया था, तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ क्यों कि राजा यह सब नहीं जानता था। पर वासवदत्ता यह

जान रोने लगी कि उसकी बहिन समुद्र में डूब गई थी।

ठीक उसी समय अन्तःपुर में लपटें उठने लगीं। हो हल्ला मचा। हाहाकार हुआ। वासवदत्ता चिल्लाई—"रक्षा करो, रक्षा करो।" राजा ने उसको आश्वासन दिया—"डरो मत। डरो मत।"

"वह नहीं। सागरिका को अन्तःपुर में जँजीरों से बाँधकर रखा है। उसकी रक्षा करो।" वासवदत्ता ने कहा।

राजा साहस करके अग्नि में घुसा। राजा के साथ और भी गये। राजा ने उस भयंकर दृश्य में यह पता लगाया कि सागरिका कहाँ बन्दी थी, उसको विमुक्त कर के चला आया। पर जब ध्यान से देखा तो कहीं लपटें न थीं, आग न थी। यह सब जादू था। जाते समय जादूगर ने जो एक और जादू दिखाने के लिए कहा था—वह यही था।

इस जादू से सब समस्यायें हल हो गईं। वसुभूति सागरिका को देखकर पहिचान गया कि वह राजकुमारी रत्नावली थी।

वासवदत्ता भी सन्तुष्ट हो, राजा और रत्नावली के विवाह के लिए मान गई।

यौगन्धराय ने जानते हुए भी यह न बताया कि सागरिका ही रत्नावली थी। इसका कारण उसका सन्देह था कि राजा उससे विवाह करने के किए मानेगा कि नहीं। आखिर जादूगर को भेजनेवाला भी यौगन्धराय था। इतना सब यौगन्धराय ने इसलिए ही किया था, ताकि राजा रत्नावली से विवाह करके सम्राट बने। इसलिए राजा और वासवदत्ता ने उसको क्षमा कर दिया।

[८]

मार्कोपोलो, जब वह बड़े खान की नौकरी में था, हमारे देश आया। यहाँ वह बहुत दिन तक रहा और उसने बहुत कुछ देखा भाला। इस यात्रा का वर्णन करते हुए उसने जापान, पूर्वी द्वीप, लंका आदि के बारे में भी बहुत-सी जानकारी दी।

यह सुन कि जापान देश श्री सम्पदा से पूर्ण था, कुबलाय खान ने उसको जीतने के लिए अपने दो सामन्तों को बहुत-सी सेना देकर भेजा। १२६८ में इस सेना ने नौकाओं में चीन का समुद्र पार किया। जापान के तट पर पहुँचकर वहाँ कई ग्रामों को वह सेना ध्वंस करने लगी।

इतने में उत्तर से तूफ़ान उमड़ने लगा। सैनिक डर गये। उन्होंने सोचा कि यदि वे तुरत न चले गये तो उनकी नौकायें तूफ़ान में नष्ट हो जायेंगी। किन्तु वे नौकाओं में चार पाँच मील गये ही थे कि तूफ़ान और तेज़ हो गया। कई नौकाएँ एक दूसरे से टकराकर टूट फूट गईं। कई सैनिक समुद्र में डूब गये। कुछ नौकाएँ असली तट पर पहुँचीं। और कुछ एक निर्जन द्वीप में जा लगीं।

तूफ़ान शान्त हुआ। द्वीप में कई हज़ार आदमी आ लगे। कई तैरते तैरते आये। द्वीप में जो नौकाएँ थीं उनमें वे सब नहीं आ सकते थे। इसलिए सेनापति सामन्त और मुख्य अधिकारी नौकाओं में अपने देश चले गये। और तीस हज़ार सैनिकों को वहीं छोड़ते गये।

द्वीप में छोड़े गये सैनिकों के लिए कोई मुक्ति-मार्ग न था। उन्होंने सोचा कि उनको मरना ही होगा। जापान के सम्राट को इन सैनिकों की दुर्गति के विषय में मालूम हुआ। द्वीप में छोड़े गये इन सैनिकों को पकड़ने के लिए उसने अपने सैनिकों को नौकाओं में भेजा।

जब उनको मालूम हुआ कि जापान के सैनिक उनको पकड़ने आ रहे थे, बड़े खान की सेना एक ओर हट गई। उन्होंने शत्रुओं को अन्दर आने दिया। फिर वे तट पर गये। जापानी नौकाओं को लेकर वे चले गये। इस तरह बड़े खान की सेना तो चली गई। जापान की सेना द्वीप में फंस गई। द्वीप में से निकले बड़े खान के सैनिकों को एक बात सूझी। वे अपनी नौकाओं को अपने देश न ले जाकर जापान की ओर ले गये। जापानवाले उन नौकाओं को देखकर असलियत न जान सके। उन्होंने सोचा कि वे नौकाएँ उनकी थीं। उन पर उनके झंडे थे। उनमें उन्हीं के सैनिक थे।

आखिर नौकाएँ तट पर लगीं और उनमें से जब सैनिकों ने निकलकर नगर पर हमला किया तो उनका मुकाबला करने के लिए नगर में कोई सैनिक न था। नगर शत्रुओं के आधीन हो गया, पर कहानी यहाँ न समाप्त हुई।

जापानी सैनिकों ने, जो द्वीप में फंस गये थे, जैसे तैसे नौकाएँ प्राप्त कीं। वे

अपने नगर गये। उन्होंने नगर को घेर लिया। उन्होंने नगर में से न किसी को आने दिया, न किसी को अन्दर ही जाने दिया। बड़े खान के सैनिकों को न सूझा कि क्या करें। आखिर वे हार मानने के लिए तैयार हो गये। शर्त यह थी कि जापानवाले उनके प्राण न लें और उनको हमेशा के लिए जापान में रहने दें।

*   *   *

मार्कोपोलो ने भारत के मार्ग में चम्पा देश देखा। आज जहाँ वीटनाम है, वहीं कहीं यह देश हुआ करता था। १२२८ में यहाँ का राजा बड़े खान द्वारा परास्त किया गया और उनका सामन्त हो गया। उस समय यह देश हाथियों और कई प्रकार के विशेष वृक्षों के लिए प्रसिद्ध था। इस देश के रिवाज के अनुसार यहाँ की कन्यायें राजा को भेंट में दी जाती थीं। ये कन्यायें, जिनसे राजा विवाह न करता था, औरों से विवाह कर सकती थीं। इसलिए इस चम्पा के राजा की कितनी ही पत्नियाँ और कितने ही बच्चे थे। मार्कोपोलो जब वहाँ पहुँचा तो चम्पा राजा के लड़के और लड़कियों की संख्या ३२६ थी।

चम्पा से १५०० मील की दूरी पर जावा द्वीप था। यह सम्पन्न देश था। यहाँ अनन्त सुगन्धित द्रव्य मिलते थे। बड़े खान ने इस देश को न जीता था। मार्कोपोलो चम्पा देश से लोकक देश गया। यह स्वतन्त्र देश था। वहाँ बहुत सोना था। इस देश से कौड़ियाँ आस पास के देशों में भेजी जाती थीं।

वहाँ से मार्को चिन्टान द्वीप पहुँचा। इसके पास का मलयूर द्वीप समुद्री व्यापार का अड्डा था। इन दोनों द्वीपों के पास छोटा जावा नाम का द्वीप था। इस द्वीप में आठ

राजा आठ राज्यों पर राज किया करते थे। इन द्वीपों से ध्रुव तारा न दिखाई देता था। यहाँ उसे जंगली हाथी और गेंडे दिखाई दिये।

मार्कोपोलो और उसके अनुचरों को सुमात्रा में पाँच मास रह जाना पड़ा। यहाँ नरभक्षक रहा करते थे। यहाँ के राज्यों में एक का नाम फन्सूर था। मार्कोपोलो ने लिखा है कि यहाँ अच्छा कपूर तैयार किया जाता था और सागूदाना एक पेड़ के तने के रस से बनाया जाता था।

छोटे नाग से मार्कोपोलो अन्डेमान और निकोबर के रास्ते आया। उसने लिखा कि यहाँ कोई राजा न था। मनुष्य पशुओं की तरह रहते थे। कपड़े भी न पहिनते थे। परन्तु उनके पास अच्छे मोती होते थे। अन्डेमान में भी नरभक्षक थे।

मार्कोपोलो अन्डेमान से लंका आया। उसने लिखा है कि असली केम्प सिवाय यहाँ के और कहीं नहीं मिलते। यहाँ केम्प ही नहीं, गोमेध, इन्द्रनील, आदि मणियाँ भी मिलती थीं। कहा जाता था कि लंका के राजा के पास हथेली के बराबर असाधारण केम्प था। बड़े खान ने बड़ी सी कीमत देकर उसे खरीदने की सोची। पर लंका के राजा ने उसे बेचने से इनकार कर दिया क्योंकि वह केम्प उनके वंश में बहुत दिनों से चला आ रहा था।

लंका से मार्कोपोलो हमारे देश आया। इस देश के बारे में भी उसने बहुत कुछ लिखा। उसके विषय में हम अगले मास जान सकेंगे। [अभी है]

आलसी नाग

पुराने ज़माने में कई ऐसे प्रसिद्ध चोर थे, जो लोगों को न सताते थे। वे कभी कभी मामूली जनता की मदद भी किया करते थे। चोरी करने में और बचकर निकल जाने में उनकी चतुराई की हर कोई प्रशंसा किया करता। इस प्रकार का एक चोर दो सौ वर्ष पूर्व चीन के सुचोऊ नगर में रहा करता था। उसका असली नाम क्या था, कोई न जानता था। सब उसको "आलसी नाग" नाम से पुकारा करते थे। वह कभी कभी कई दिनों तक लगातार सोता रहता। यह भी कहा जाता था कि उसने यह नाम स्वयं रखा था।

"आलसी नाग" के बारे में कई कहानियाँ प्रचलित थीं। उसने कभी भी गरीबों को न लूटा। जिन लोगों ने अन्याय और अत्याचार करके धन जमा किया हुआ था, उन्हीं को वह लूटता और जो कुछ लूटता उसे वह गरीबों में बाँट देता। इसलिए बहुत चोरी करने पर भी उसकी अपनी सम्पत्ति कौड़ी भर भी न थी। एक बार भी उसको सरकारी कर्मचारी न पकड़ सके। पर सब जानते थे कि वह पहुँचा चोर था। कई अधिकारियों ने भी उसकी मदद पायी थी।

इस विचित्र चोर की कुछ कहानियाँ सुनिये :—

एक बार आलसी नाग को मालूम हुआ कि एक रईस ने एक जुलाहे से हज़ार तोला चान्दी ले रखी थी। उसने जैसे भी हो उसको चोरी करना चाहा। वह चोरी करने गया, मगर अन्धेरे के कारण गलती से वह एक गरीब के घर में घुसा। उस घर में छुपने छुपाने के लिए सिवाय एक

बेन्च के कुछ भी न था। आलसी नाग सिकुड़कर उसके नीचे बैठ गया।

थोड़ी देर बाद, घरवाला और उसकी पत्नी भोजन के लिए बैठे। खाना भी रूखा सूखा ही था। पति ने दीन स्वर में पत्नी से कहा—"कर्ज चुकाने का समय हो गया है—पास कानी कौड़ी भी नहीं है। सिवाय आत्महत्या के और कोई रास्ता नहीं है।"

"आत्महत्या न कीजिये। मुझे बेच दीजिये। जो कुछ पैसा मिले उससे छोटा-मोटा व्यापार शुरु कीजिये।" पत्नी ने कहा। दोनों ने आँसू बहाये।

इतने में आलसी नाग बेन्च के नीचे से निकला। "डरो मत। मैं गल्ती से तुम्हारे घर घुस आया और तुम आफत में मालम होते हो। मैं तुम्हें दो सौ तोला चान्दी दूँगा। कोई व्यापार कर लो। पर आत्महत्या न करो।" यह कहकर वह बाहर चला गया।

थोड़ी देर बाद उनके दरवाजे के सामने धड़ाम से कोई आवाज हुई। किवाड़ खोलकर देखा तो वहाँ एक पोटली पड़ी थी और उसमें दो सौ तोला चान्दी थी। उस धन से उनके कष्ट दूर हो गये।

आलसी नाग के एक बचपन के मित्र ने बड़े होकर, अपना सब कुछ खो दिया, और बिल्कुल कंगाल हो गया। जब वह एक दिन एक गली में दिखाई दिया तो अलासी नाग को अपनी आँखों पर ही विश्वास न हुआ। "अरे कैसे इतने बदल गये?" उसने अपनी कहानी सुनाई।

"किसी से न कहना, मैं कल एक अमीर के घर चोरी करने जा रहा हूँ। अगर तुम मेरे साथ आये तो तुम्हें भी कुछ दे दूँगा।" आलसी नाग ने कहा।

मित्र आश्वासित हुआ क्योंकि वह जानता था कि नाग कहा न मुकरता था। अगले दिन आलसी नाग के साथ वह एक सरकारी कर्मचारी के घर गया। वह अपने मित्र को परकोटे के पास खड़ा करके, एक पेड़ पर चढ़कर घर के आँगन में कूद पड़ा। बहुत समय हो गया, पर आलसी नाग वापिस न आया। इतने में परकोटे के पास बैठे मित्र पर कुत्ते भौंकने लगे, वह भागने लगा। थोड़ी देर बाद आलसी नाग उसे मिला। उसने कहा—"आज तो, तेरे लिये मरने तक की नौबत आ पड़ी थी। उस घर में सोने का ढ़ेर पड़ा है। मैं थोड़ा-सा लेकर जो निकला, तो कुत्ते मेरे पीछे पड़ गये। लोग भी उठे और वे भी मेरा पीछा करने लगे। सोना मैंने दूर फेंक दिया और जान बचाकर भाग आया।"

"अगर तुम जैसे चालाक चोर पर ही ऐसी बीती है तो यही कहना होगा कि मेरा भाग्य अच्छा न था।" उस मित्र ने लम्बा श्वास छोड़ा।

फिर एक महीने बाद दोनों मित्र मिले। आलसी नाग ने उसके मित्र से कहा—"मैंने उसी दिन ही एक पेटी चुराली थी। अगर उसे मैं तभी दे देता तो उस कर्मचारी के आदमी तुम्हें पकड़ लेते। इसलिए पेटी को मैंने उस आंगन में पानी के एक गड्ढे में फेंक दिया। न मालूम क्यों कर्मचारी चुप बैठा है। इसलिए आज उसे हम ले आयेंगे।" आलसी नाग ने कहा। रात को आलसी नाग वह पेटी उठा लाया। उसमें सोना और चान्दी भरा था। उसमें से रत्ती भर भी आलसी नाग ने न लिया। उसने सारा का सारा मित्र को देते हुए कहा—"इससे अच्छी खासी जायदाद कमाओ और आराम से रहो।"

उसका मित्र, उस धन से व्यापार करके बहुत धनी हो गया।

आलसी नाग बहुत-सी विद्यायें जानता था। वह तरह तरह की आवाजें कर सकता था। कई तरह से बातें कर सकता था, हर किसी की नक़्ल किया करता। ये सब हुनर समय समय पर उसके काम आते थे।

एक दिन वह एक घर में घुसा, उसने देखा कि उस कमरे का किवाड़ खुला था, जिस में कपड़े आदि रखे जाते थे। उसने कपड़े चुराने की सोची परन्तु वह अभी उस कमरे में गया था कि घरवालों ने दासी को कमरा बन्दकर आने के लिए भेजा। चोर कमरे में ही बन्द हो गया। जब उसे मालूम हुआ कि बिना ताला खोले बाहर जाने का कोई रास्ता न था, तो उसे एक उपाय सूझा। जितने उससे पहिने जा सकते थे, उतने कपड़े पहिनकर और कुछ की गठरी बाँधकर उसे किवाड़ के पास रख वह इस तरह आवाज करने लगा, जैसे कोई चूहा कपड़े काट रहा हो।

घर के मालिक ने वह आवाज सुनकर कहा—"मालूम होता है, कपड़ोवाले कमरे

में चूहा घुस आया है। ताला खोलकर उसको भगा दो और फिर ताला लगा दो।" उसने दासी को आज्ञा दी।

दासी दीया लेकर आई। उसने ताला खोला। उसने ज्योंही किवाड़ खोला, त्योंही कपड़ों का गट्ठर लुढ़का। उसके साथ आलसी नाग भी लुढ़का और उसने दासी के हाथ का दीया बुझा दिया।

दासी जोर से चिल्लाई। अगर थोड़ी देर वहाँ वह रहता, तो लोग आ जाते। इसलिए दासी को एक ओर धकेलकर, गट्ठर लेकर चलता हुआ। मालिक भागा भागा आया। अन्धेरे में उसने दासी को चोर समझकर उसकी खूब मरम्मत की। उसका चिल्लाना सुन बाकी घरवाले जमा हो गये। जब रोशनी की गई तब असलियत मालूम हुई। जब तक यह मालूम हो सका कि मालिक ने दासी को पकड़ा था, चोर को नहीं, तब तक असली चोर नौ दो ग्यारह हो चुका था।

एक बार एक रईस ने एक रेशम के व्यापारी को बहुत बड़ी रकम पेशगी के तौर पर दी। आलसी नाग ने वह रकम हड़पनी चाही। व्यापारी ने वह धन, पत्नी

के पलंग के पास छुपा रखा था। वह रात दिन उसकी रक्षा करता आ रहा था।

आलसी नाग एक दिन उस व्यापारी के घर में घुसा। उसकी पत्नी के कमरे में गया। पलंग पर पैर रखकर उसने धनवाली पेटी पकड़ ली।

इतने में व्यापारी की पत्नी उठी। उसे सन्देह हुआ कि पलंग पर कुछ था। उसने अन्धेरे में ढूँढ़ा, टटोला। जब उसके हाथ में चोर का पैर आया, तो उसने उसे जोर से पकड़ लिया। उसने तुरत अपने पति को उठाया—"ये लो चोर, मैंने उसका पैर जोर से पकड़ रखा है।"

उसी समय आलसी नाग ने व्यापारी के पैर पर जोर से चूँटी काटी। व्यापारी दर्द के मारे चिल्लाया—"नहीं नहीं, यह मेरा पैर है।" पत्नी घबरा गई और उसने जो पैर पकड़ रखा था, उसे छोड़ दिया। झट आलसी नाग पेटी लेकर चम्पत हो गया।

फिर पति-पत्नी में चख-चख हुई।

"मैंने चोर का पैर ही पकड़ा था। मुझसे फाल्तू उसे छुड़वा दिया।" पत्नी ने कहा।

"वाह वाह, अब भी मेरे पैर में दर्द हो रहा है।" पति ने कहा।

"तुम्हारा पैर अन्दर की ओर था और मैंने पकड़ा था बाहर की ओर और फिर मैंने चूँटी भी नहीं काटी थी।" पत्नी ने कहा।

"तो मुमकिन है कि चोर ने ही मेरे पैर पर चूँटी काटी हो। तुम्हें उसका पैर नहीं छोड़ना चाहिए था।" पति ने कहा।

"जब तुम उस तरह चिल्लाये तो मैं घबरा गई।" पत्नी ने कहा। बहस के बाद पेटी ढूँढ़ी तो वह गायब थी। (अभी है)

ब्रह्मा की सृष्टि

एक और पूर्णिमा आई। बाबा खिली चान्दनी में आराम कुर्सी पर बैठा हुआ था। नास नाक में डालकर बाबा ने एक श्लोक सुनाया....

"वस्तुषु ब्रह्मसृष्टेषु
स्थावरेषु चरेषुच
सफलं दृश्यते सर्वं
विफलं नैव दृश्यते।"

चारों ओर बैठे हुए बच्चों ने एक साथ पूछा—"बाबा, इसका अर्थ क्या है? बताओ।"

"इस श्लोक का अर्थ पूछ रहे हो? सुनो, ब्रह्मा की सृष्टि में, हिलने डुलनेवाली चीज़ें और स्थावर चीज़ें कितनी ही हैं। परन्तु इनमें व्यर्थ कोई चीज़ नहीं है। सब का कोई न कोई उपयोग है। इस श्लोक का अर्थ यह है। समझे?" बाबा ने कहा।

"यह बात किसने कही है बाबा, कोई कहानी सुनाओ, बाबा।" बच्चों ने कहा।

"और कोई कहानी क्यों सुनाऊँ? इस विषय के बारे में ही कहानी सुनाता हूँ। सुनो...." कहकर बाबा ने यह कहानी सुनाई।

किसी जमाने में अंगदेश का अंगपाल राजा था। मालूम है, उसने क्या किया?

उसने बहुत दिन अनुसन्धान किया कि संसार में कौन सी उपयोगी वस्तु हैं और कौन-सी अनुपयोगी। आखिर उसने यह तय किया कि सृष्टि में सिवाय मच्छर और मकड़ी के बाकी सब चीज़ें किसी न किसी काम आती हैं।

फिर क्या था, उसने आज्ञा दी कि उसके राज्य में जहाँ कहीं मच्छर हों या

मकड़ा हो, उनको मार दिया जाय। उनको न रहने दिया जाय।

यह राज्यवासियों को भी भाया।

इसलिए वे राजा की कार्यवाही देखकर बड़े खुश हुए।

इतने में मालूम है क्या हुआ? अकस्मात् शत्रुओं ने अंगदेश पर आक्रमण किया।

क्योंकि अंगपाल युद्ध के लिए सन्नद्ध न था, इसलिए वह कुछ विश्वासपात्र सेवकों को लेकर जंगल में भाग गया।

उस दिन रात को राजा और उसके सेवक जंगल में ही सोये। परन्तु रात को मच्छरों ने उनकी निद्रा भंग की।

यह अच्छा ही हुआ, क्योंकि उस समय शत्रु राजा को जंगल में खोज रहे थे।

आहट सुनकर राजा ने सोचा कि वहाँ रहने से खतरा हो सकता था। इसलिए वह वहाँ से चल पड़ा और जाकर एक पहाड़ी गुफ़ा में छुप गया।

सवेरा होने पर शत्रु राजा को खोजते उस गुफ़ा में आये। परन्तु मकड़ियों ने उस गुफ़ा के द्वार पर जाल बुन रखे थे। इसलिए शत्रुओं को पता न लग पाया कि अन्दर कोई है कि नहीं। वे चले गये।

तब अंगपाल को अपनी गलती मालूम हुई।

मच्छरों ने उसको नींद से उठाकर यह जताया कि शत्रुओं का वहाँ भय था।

मकड़ियों ने तो उसकी जान ही बचाई थी।

इससे यह स्पष्ट हो गया कि ब्रह्मा की सृष्टि में कुछ भी व्यर्थ नहीं है।" बाबा ने कहा।

अन्याय है सर—सौ मार्कों में आपने शून्य दिया है ?

"हाँ, अन्याय ही है। क्या करता, शून्य से कम तो कुछ है नहीं।

दुष्ट कहीं का ! अगर वह न रोकता, तो सुधीर को पीट पीटकर चटनी बना देता।

किसने रोका था ?

और कौन ? उसी सुधीर ने।

हम दोनों से अपना नाम सौ बार लिखवाना अन्याय है। इसका नाम केवल "राम" है और मेरा नाम वीर वेन्कट सत्यनारायण वर प्रसाद मूर्ति।

आपकी नब्ज बिल्कुल ठीक है। कोई परवाह नहीं, घड़ी की तरह चल रही है।

"आप मेरी घड़ी पर हाथ रखकर नाड़ी देख रहे हैं।"

चित्रकार : एन. शंकरनारायण

मेवाड़ का सिंह

राजपूत सूर्यवंश से सम्बन्धित हैं। अत्युत्तम देशभक्ति और क्षत्रिय धर्म उनमें अन्त तक रहा। मुगलों के हमारे देश में आने के पूर्व, कई राजपूत वीर अपने पराक्रम, व त्याग से इतिहास में अमर हो चुके हैं। उनमें महाराणा प्रताप बहुत मुख्य है। वह ही मेवाड़ के सिंह के नाम से जाना जाता हैं।

राणा प्रताप के मेवाड़ की गद्दी पर बैठने के चार साल पहिले ही मेवाड़ की राजधानी चितौड़ मुगलों के वश में हो गई थी। फिर भी प्रतापसिंह अरावली पर्वतों में राजधानी बनाकर मुगलों को मेवाड़ वश में करने से रोकता रहा।

उन दिनों मुगलों का सम्राट अकबर था। उसने राणा प्रताप के अनिरिक्त सभी राजपूत राजाओं को अपना सामन्त बना लिया था। प्रतापसिंह को भी उसने अपने दरबार में निमंत्रित किया।

परन्तु स्वाभिमानी प्रतापसिंह अकबर का सामन्त होने के लिए नहीं माना। वह उन राजपूतों को भूल न पाया था, जिन्होंने देश की स्वतन्त्रता के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया था। इतना सब हो जाने के बाद, वह अकबर का सामन्त हो कर भोगविलास का आनन्द न लेना चाहता था। उसने उससे अच्छा स्वतन्त्रता के लिए युद्ध करते करते कष्ट झेलते झेलते मर जाना समझा।

अकबर को युद्ध के मैदान में परास्त करना असम्भव था। राजपूत वीर सब अकबर के सामन्त थे। प्रतापसिंह का छोटा भाई, शक्तिसिंह अकबर के दरबार में था। अकबर से युद्ध करना इन सब के

जयदेव

साथ युद्ध करने के बराबर था। वह अकेला था। युद्धों के कारण मेवाड़ में खेतीबाड़ी भी चौपट पड़ी थी। प्रतापसिंह के पास उल्लेखनीय सेना भी न थी। पैसा तो था ही नहीं।

फिर भी प्रतापसिंह निरुत्साहित नहीं हुआ। विजय के बारे में सपने लेना भी उसने नहीं छोड़ा और तो और उसकी प्रजा को भी उसमें अत्यन्त विश्वास था। उनमें से कुछ मुगलों के दिये हुए लालच में फँस कर उसको धोखा दे सकते थे, पर किसी ने वह न किया।

उस समय सूरत विदेशी व्यापार का मुख्य केन्द्र था। व्यापारी माल लेकर मेवाड़ की सीमा के पास से जाया करते। प्रतापसिंह के आदमी यह माल लूटने लगे। उस रास्ते से जाने में व्यापारी डरने लगे। सूरत का बन्दरगाह बन्द-सा हो गया। परन्तु प्रतापसिंह को आवश्यक धन न मिल सका। फिर भी, वह अरावली पर्वत के अपने कमलमेर के दुर्ग को मजबूत कर सका। इस प्रान्त के भीलों ने उसका समर्थन किया। मुगलों से आक्रमण का मुकाबला करने के लिए उन्होंने आवश्यक प्रशिक्षा भी पाई। शत्रुसेना, यदि पहाड़ की पगडंडी से आती तो उन पर पत्थर लुढ़काने के लिए भी उन्होंने पत्थर घाटियों में जमा कर दिये, वे सदा सावधान रहते।

इतने में एक बात हुई। अकबर का मुख्य सेनापति, मानसिंह दक्षिण में शोलापुर जीतकर, वापिस आता महाराणा को देखने आया। उदयसागर की झील के पास बड़ी दावत का प्रबन्ध हुआ। पर प्रतापसिंह न आया। मानसिंह को लगा कि प्रतापसिंह ने उस पर सन्देह किया था। उसने गुस्से में आकर अकबर से कहा कि उसका अपमान हुआ था।

अगर उसने अपने मुख्य सेनापति के अपमान का बदला न लिया, तो और सामन्तों का उसके प्रति गौरव कम हो जायेगा, यह सोचकर अकबर ने अपने लड़के सलीम और मानसिंह को नेता बनाकर लाखों की सेना मेवाड़ पर आक्रमण करने के लिए भेजी। इस सेना की मुठभेड़ १५७६ जुलाई में हल्दी घाटी में राजपूतों से हुई।

प्रतापसिंह के साथ २२ हज़ार सैनिक ही थे। दिन पर भयंकर युद्ध होता रहा। कहा जाता है राजस्थान में उससे भयंकर युद्ध कभी भी न हुआ था। इस युद्ध में प्रतापसिंह के १४ हज़ार सैनिक मारे गये। मुगलों की सेना में और भी अधिक मारे गये थे।

राणा प्रतापसिंह साहसपूर्वक लड़ता लड़ता घायल हुआ। उसके हाथ से सलीम मरते मरते बचा। प्रतापसिंह जब आपत्ति में था उसका एक सरदार शत्रुओं की आँखों में धूल झोंकने के लिए, उसके राजकीय वस्त्र पहिन कर एक ओर भागने लगा। शत्रुओं ने उसको प्रतापसिंह समझकर उसका पीछा किया और उसको मार दिया।

परन्तु प्रतापसिंह उन सैनिकों के हाथ से बाहर जा निकला, जो उसे घेरे हुए थे।

युद्धभूमि से भागते हुए प्रतापसिंह को दो मुगल सरदारों ने पहिचान लिया। उसका उन्होंने पीछा किया। प्रताप का घोड़ा 'चेतक' तब तक बिल्कुल थक चुका था।

उसी दिन प्रतापसिंह उन मुगलों के हाथ मारा जाता यदि प्रतापसिंह का छोटा भाई शक्तिसिंह कहीं से आकर उन दोनों मुगल सरदारों को मारकर अपने भाई की रक्षा न करता। दोनों ने आलिंगन किया। शक्तिसिंह ने शपथ की कि वह भाई की तरफ़ से ही लड़ेगा।

जहाँ दोनों भाई मिले, वहाँ 'चेतक' ने गिरकर प्राण छोड़ दिये। प्रतापसिंह अपने भाई के घोड़े पर जिसका नाम 'ओंकार' था सवार होकर जंगल में चला गया। अब भी वहाँ एक चबूतरा-सा स्मारक है, जहाँ 'चेतक' गिरा था। यह हल्दी घाटी से कोई दस मील की दूरी पर है।

वर्षाकाल के बाद मुगल सेना ने कमलमेर के किले को घेरा। किले के

मरा या जिन्दा पकड़कर लायेगा। परन्तु हुआ ऐसा कि वह ही प्रतापसिंह का कैदी बना लिया गया और उसको प्रतापसिंह के सामने हाज़िर होना पड़ा। प्रताप ने उसका कुछ न बिगाड़ा। उसके हथियार लेकर उसने उसको भेज दिया।

इसी तरह एक बार खानखाना नामक बड़े सामन्त की अन्तःपुर की स्त्रियाँ प्रताप के आदमियों के हाथ कैदी हुईं। महाराजा ने उनका खूब आदर सत्कार किया। रक्षकों के साथ खानखाना के पास उन्हें वापिस भेज दिया। प्रताप की उदारता को प्रशंसा में खानखाना के बनाये हुए गीत अब भी प्रचलित हैं। इन गीतों को अकबर बादशाह ने भी सुना।

कुयें में किसी ने विष मिला दिया। इस कारण राणा प्रताप का किले में रहना असम्भव हो गया। वह अपने कुटुम्ब के साथ जंगलों में चला गया। उसने भी हरिश्चन्द्र और नल की तरह नाना कष्ट झेले।

इस स्थिति में भी वह प्रतीकार के विषय में सोचता रहा। जब कभी मुगल सेना से भेंट होती उनका सर्वनाश करता रहता। मुगल सेनापतियों में से एक ने जिसका नाम फरीदखान था, फरिश्ता के नाम पर कसम खाई कि वह प्रताप को

उन्हीं दिनों एक मेवाड़ कवि जब बादशाह के दरबार में गया तो अकबर के सामने झुककर सलाम करते समय उसने अपनी पगड़ी उतार ली। अकबर ने पूछा कि उसने वैसा क्यों किया था। "इस पगड़ी को महाराणा प्रताप ने मुझे दिया था। उन्होंने किसी के सामने सिर नहीं झुकाया है। उनकी दी हुई पगड़ी को कैसे मैं अपने सिर के साथ झुकाऊँ?" उसने

कहा। अकबर ने सन्तुष्ट होकर भरे दरबार में ही राणा प्रताप की प्रशंसा की।

पर्वतों में भीलों के संग राणा प्रतापसिंह कष्टमय जीवन बिता रहा था। उसका भविष्य अगम्य-सा था। उस स्थिति में यदि वह अकबर से सन्धि कर लेता तो उसके कष्ट समाप्त हो सकते थे। हो सकता है कि उसने यह भी सोचा हो कि बिना सन्धि किये वह कर भी क्या सकता था। कुछ भी हो, अकबर के पास खबर पहुँची कि राणा प्रताप सिंह सन्धि के लिए तैयार था। अकबर के आनन्द की सीमा न रही। उसने खुशी में दावतें दीं। अकबर की कैद में पड़े राजपूत युवकों में से एक, जिसका नाम पृथ्वीराज था, इसपर विश्वास न कर सका। उसने कहा—"चाहे अकबर सारा मुगल साम्राज्य दे दे तो भी प्रतापसिंह समझौते के लिए नहीं मानेगा।" उसने उस दूत को कुछ गीत लिखकर दिये, जिसको अकबर, राणा प्रताप के पास भेज रहा था। प्रतापसिंह इन गीतों को पढ़कर जोश में आ गया। उसने दूत से कहा—"बादशाह से सन्धि कर लेना मेरे लिए असम्भव है।"

उसमें यह आशा जाती रही कि वह फिर कभी मेवाड़ जीत सकेगा। उसने अपना देश छोड़कर सिन्धु नदी के पार अपने लिए एक राज्य बनाने की ठानी। वह अपने कुटुम्ब के साथ निकल पड़ा।

इस परिस्थिति में उसको एक और विश्वासपात्र मिला। इस व्यक्ति का नाम भामाशा था। वह सम्पन्न था। उदयपुर का निवासी था। उसने अपने देश के लिए अपना सर्वस्व दे देने का निश्चय किया। वह एक घोड़े पर सवार होकर महाराणा को ढूँढ़ता सिन्धु नदी की ओर

निकला। उसे महाराणा मिला। भामाशा ने अपने खजाने की चाबियों को प्रतापसिंह के पैरों के पास रखकर निवेदन किया—"मेवाड़ का विमोचन कीजिये।" प्रतापसिंह उसके निवेदन को ठुकरा न सका।

भामाशा ने बहुत-सी धनराशि दी। राणा प्रताप ने उस धन की सहायता से चुपचाप एक सेना जमा की। सेना को लेकर वह मेवाड़ की ओर निकला पड़ा।

मुगलों को सपने में भी न ख्याल था कि प्रतापसिंह इस तरह आक्रमण करेगा। उनका ख्याल था कि प्रतापसिंह सिन्धु नदी के पार चला गया था। प्रतापसिंह ने मुगलों की एक एक छावनी पर हमला किया और उनकी सेना को नष्ट करता गया। कमलमेर के दुर्ग में एक भी मुगल ज़िन्दा न बचा। चित्तौड़ और मंडल घर के किलों के सिवाय और सब किले फिर राणा प्रताप के आधीन हो गये। १५८६ में मेवाड़ से शत्रु करीब करीब हटा दिये गये। प्रतापसिंह ने राजा मानसिंह के राज्य को भी अपने वश में कर लिया।

क्योंकि उस समय अकबर बन्गाल और अन्यत्र विद्रोहों के दमन करने में व्यस्त था, मेवाड़ के मामले में उसने अधिक ध्यान न दिया। प्रतापसिंह ने उन सरदारों को जागीरें दीं, जिन्होंने उसकी सहायता की थी। उसके स्वप्न साकार हुए। १५९६ तक उसने मेवाड़ का निर्विघ्न रूप से परिपालन किया। उसके बाद मरकर वह अमर हो गया।

अब भी महाराणा प्रतापसिंह की वीर गाथाएँ गायी सुनी जाती हैं।

इस भद्दी मजाक के लिए उस बौने की खूब मरम्मत की गई और उसे कड़ाई भर मलाई खिलाई गई।

परन्तु उसने बदला लेने की ठानी। उसने एक दिन भोजन में, शोरबे में से एक हड्डी निकाली और उसमें मुझे ठूस दिया।

एक दिन उसने जटायू जितनी बड़ी बड़ी मक्खियाँ मुझ पर छोड़ दी। तलवार लेकर मुझे उनसे लड़ना पड़ा।

एक बार बाग में सेब के पेड़ से पीपे जितने बड़े बड़े सेब तोड़कर उसने मुझ पर बरसाये।

ये सब देखकर रानी बौखला उठी। उसने उस बौने को किले से मरवा पिटवाकर भगा दिया। उसे दण्ड दिया।

कुछ दिन बड़े मजे में कटे। मेरे लिए एक छोटी-सी नाव बनाई गई, ताकि उसमें मैं घूम फिर सकूँ, पानी की बड़ी नाँद भी।

आया रोज मुझे बाग में खिलाती। एक दिन माली का कुत्ता, मुझे मुख में दबाकर सारे बाग में दौड़ा-भागा।

और माली ने मुझे कुत्ते से बचाया। और उसने डरती आया को मुझे चुपचाप सौंप दिया।

किले में जब सब हँसे, तो मैं शर्माया। कुत्ते के पिल्ले ही नहीं बल्कि उस देश की छोटी मोटी चिड़ियायें भी मेरी परवाह न करतीं। वे मेरा बिना ख्याल किये आराम से घूमते। आखिर उनके लिए मैं था ही क्या?

उस देश में बारिश और ओले भी बड़े पैमाने पर होते थे। वर्षा की बून्द ओले जितनी होती और ओले कद्दू के बराबर होते।

पर असली आपत्ति तो मुझ पर एक बन्दरी की बदौलत आई। मैं एक दिन अपने कमरे में बैठा था।

हाथी जैसे बन्दरी को मैं भाया तो, उसे कमरे में मुझे ढूँढ-ढाँढकर सहला सहलाकर पकड़ना पड़ा।

माया की आवाज सुनकर छत की ओर कूदी। मैं अपनी जान हथेली में रखे, बन्दर की हथेली में था।

इस बीच वहाँ बहुत से आदमी जमा हो गये। पर बन्दरी ने मुझे न छोड़ा, उसने मुझे दूध पिलाना चाहा।

आखिर सीढ़ियों पर राज सैनिकों को चढ़ता देख, बन्दरी डर गई और मुझे वहाँ फेंककर चली गई।

बाद में राजा से बात करते हुए मैंने कहा—इस देश की बन्दरी थी, इसलिए डर गया। हमारे देश में ऐसा होता तो मैं खबर लेता, मैंने तलवार घुमा घुमाकर कहा। राजा ने परिहास किया। मुझे ऐसा लगा कि बड़े लोगों के सामने अपनी प्रतिभा दिखाना हास्यास्पद था।

फिर भी मैंने अपने देश के बड़प्पन के विषय में, धर्म, शान्ति की रक्षा, युद्ध आदि के बारे में बढ़ा चढ़ाकर बताया। सब सुनकर उसने इधर उधर देखते हुए अपने मन्त्री की ओर हँसकर कहा—"इतने छोटे से जीव को भी इतना घमंड।"

"कहते हैं कि इनमें राजनीति है। सेना है, बड़े और छोटों का भेद है। शान्ति की रक्षा के लिए युद्ध करते हैं। इनका इतिहास युद्ध और धोखेबाजी से भरा पड़ा है। इनके जैसे मूर्ख और अधार्मिक इस भूमि पर और कहीं न मिलेंगे।" उसने कहा।

सोने का मन्दिर - अमृतसर

सिक्खों का सोने का मन्दिर, पंजाब के अमृतसर नगर में हैं। सिक्खों के चौथे गुरु रामदास ने अकबर से वह जगह ली, जहाँ आजकल अमृतसर है, वहाँ उसने इस मन्दिर की नींव डाली। उसके बाद गुरु अर्जुनदेव ने तालाब खुदवाया और उसके बीच में यह तालाब बनवाया। पंजाब के राजा रणजीतसिंह ने, जो सिक्ख था (१७८०-१८३९) इस मन्दिर के कलशों पर, ताम्बे की चादरें मंढ़वाकर, उनपर सोना लगवाया।

इस सोने के मन्दिर में रेशम के अच्छादन के नीचे सिक्खों का पवित्र ग्रन्थ गुरु ग्रन्थ साहब रखा हुआ है। "गुरु का बाग" में सिक्ख धर्म के संस्थापक गुरु नानक के जीवन से सम्बन्धित बहुत-सी घटनायें चित्रित हैं।

सोने के मन्दिर से करीब पचास गज की दूरी पर "अकाल तख्त" नाम का एक भवन है। यह भवन सिक्ख धर्मावलम्बियों के लिए बहुत ऐतिहासिक महत्व रखता है। यहाँ ही सिक्ख गुरुओं की सभायें होती। धार्मिक समस्याओं पर चर्चा होती और उनका परिष्कार किया जाता।
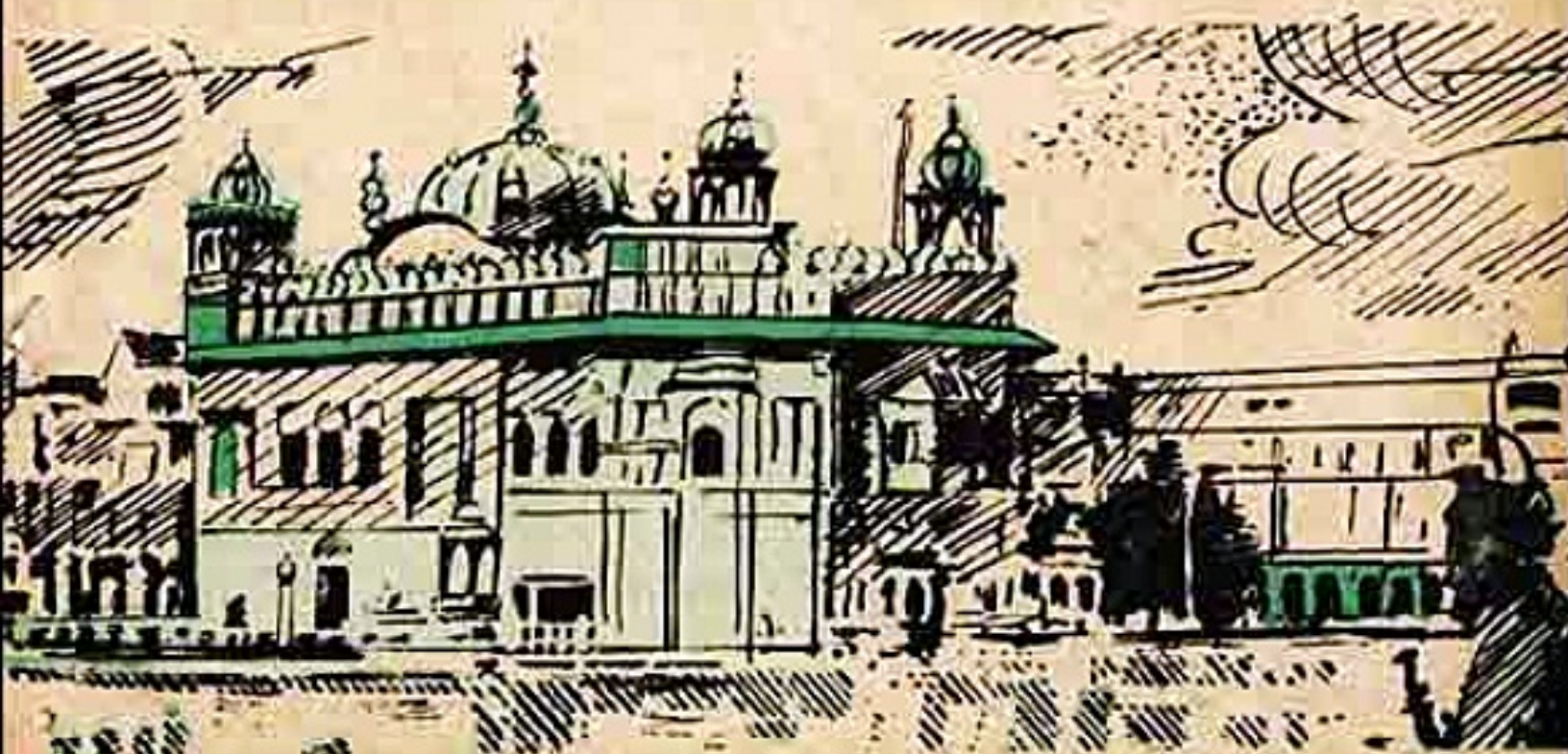
गोदावरी के तट पर प्रतिष्टान देश था। उसकी राजधानी का नाम सुप्रतिष्टित था। उस नगर में सोमशर्मा नाम का ब्राह्मण रहा करता था। उसके दो लड़के थे और उसके श्रुतार्थ नाम की लड़की भी थी। भाइयों को बिना बताये श्रुतार्थ ने कीर्तिसेन नाम के नाग युवक से गन्धर्व विवाह कर लिया था। उसके एक लड़का भी हुआ। जिसका नाम गुणाढ्य था।

गुणाढ्य अभी छोटा ही था कि माँ और मामा गुज़र गये। तब वह लड़का दक्षिण देश की ओर चला गया। सब विद्यायें उसने वहाँ सीखीं। कीर्ति प्राप्त की। कई शिष्य भी बनाये। उन सबको लेकर वह सुप्रतिष्टित नगर वापिस आया।

उस समय उस नगर का परिपालन सातवाहन महाराजा कर रहा था। नगर सम्पदा से परिपूरित था। गुणाढ्य ने राजा को अपने शिष्यों द्वारा अपने आगमन की सूचना दी। उसे दरबार में बुलाया गया। गुणाढ्य ने सातवाहन महाराजा को आशीर्वाद दिया। दरबारियों ने उसको गुणाढ्य की प्रतिष्ठा के बारे में बताया। सातवाहन ने सन्तुष्ट होकर गुणाढ्य को अपना मन्त्री नियुक्त किया। गुणाढ्य विवाह करके सुखपूर्वक वहीं रहने लगा।

यह सातवाहन, दीपकर्णी नामक राजा को मिला लड़का था। जब दीपकर्णी की पत्नी साँप के काटने से मर गई, तो राजा ने फिर विवाह नहीं किया। परन्तु उसे यह चिन्ता सताती रही कि उसके राज्य का कोई उत्तराधिकारी न था। एक बार दीपकर्णी शिकार खेलता खेलता, जंगल में

बहुत दूर चला गया। उसे ठीक दुपहरी में शेर पर एक लड़का सवार दिखाई दिया। जब वह शेर एक नाले के पास बच्चे को उतार कर पानी पीने गया तो राजा ने उसे बाण से मार दिया।

दीपकर्णी ने उसका नाम सातवाहन रख कर, उसको पाल पोसकर बड़ा किया। फिर सातवाहन का पट्टाभिषेक हुआ। वह बड़े साम्राज्य का सम्राट भी बना।

परन्तु सातवाहन संस्कृत न जानता था। न उसमें पांडित्य ही था। इसलिए उसका अपमान भी हुआ।

एक दिन सातवाहन अपनी रानियों के साथ वन विहार करके जलक्रीड़ा कर रहा था। एक रानी पर उसने पानी उछाला। क्योंकि वह तब तक काफी थक चुकी थी इसलिए उसने "मुझे पानी से न मारो" कहने के लिए संस्कृत में कहा—"राजन, मोदकैस्ताड़य" इसका समास यूँ टूटता है—"मा उदकै ताड़य" क्योंकि राजा संस्कृत न जानता था, इसलिए उसने सोचा रानी मोदक। (लड्डू!) चाह रही है। और नौकरों से उसने लड्डू मँगवाये। उनको देखकर रानी ने हँसकर कहा—"तुम तो संस्कृत के समास भी नहीं जानते।" इस अपमान से राजा सातवाहन इतना शर्मिन्दा हुआ कि उसने खाना पीना भी छोड़ दिया। बीमार हो गया। राजा की इस आकस्मिक व्याधि से उत्पन्न स्थिति पर सभी चिन्तित थे।

शर्ववर्मा नाम का एक मेधावी राजा के दरबार में रहा करता था। उसने और गुणाढ्य ने मिलकर राजा की व्याधि का कारण मालूम किया। उन्होंने राजा के पास जाकर भी वास्तविक कारण पता कर लिया।

सातवाहन ने गुणाढ्य से पूछा—"परिश्रम से पढ़ने पर पंडित बनने के लिए कितने दिन लगते हैं?"

"महाराज, व्याकरण सब विद्याओं का आधार है। उसको पढ़ने में साधारण व्यक्तियों को बारह वर्ष लगते हैं। मैं आपको छः वर्षों में सिखाऊँगा।" गुणाढ्य ने कहा।

तुरत शर्ववर्मा ने कहा—"राजन्! मैं आपको छः महीनों में पंडित बना दूँगा।"

गुणाढ्य यह सुनकर क्रुद्ध हुआ "यदि तुम यह कर सके, तो मैं मनुष्यों की भाषा संस्कृत, प्राकृत, देशीय भाषाओं में बोलना बन्द कर दूँगा," उसने प्रतिज्ञा की।

"यदि तुमने छः मास में राजा को पंडित न बना दिया तो बारह वर्ष तुम्हारी खड़ाऊँ सिर पर रखा रखा फिरूँगा।" शर्ववर्मा ने भी प्रतिज्ञा की।

इन दोनों के वादविवाद से राजा को विश्वास हो गया कि वह पंडित हो सकेगा।

शर्ववर्मा जानता था कि किसी के लिए भी छः महीनों में पंडित हो जाना सम्भव नहीं था। तो भी, प्रतिज्ञा करने के बाद कि वह यह सम्भव कर सकेगा कि नहीं, इस चिन्ता से वह व्याकुल हो गया। उसने घर जाकर पत्नी से अपनी असम्भव प्रतिज्ञा के बारे में कहा।

"अगर आप इस दुविधा से बाहर होना चाहते हैं, तो कुमारस्वामी के अतिरिक्त आपकी कोई सहायता नहीं कर सकता।" पत्नी ने शर्ववर्मा से कहा।

पत्नी की सलाह के अनुसार शर्ववर्मा अगले दिन मुंह अन्धेरे कुमारस्वामी के मन्दिर में गया। उसने बिना कुछ खाये पिये, तपस्या करके कुमारस्वामी को सन्तुष्ट किया। वे प्रत्यक्ष हुए तो उसने वर माँगा कि राजा

विना पढ़े ही छः मास में पंडित हो जाये। कुमारस्वामी ने तथास्तु कहा।

यह जानकर कि राजा सब विद्यायें सीख गया है, प्रजा ने घरों पर झन्डे फहराकर उत्सव मनाया। सातवाहन ने शर्ववर्मा को अपना गुरु समझकर उसकी पूजा करके नर्मदा तीर के मरुकच्छप देश का उसे राजा बना दिया। उस पत्नी को, जिसने कहा था कि वह पंडित न था, उसने मुख्य रानी बना दिया।

राजमहल में बड़ी सभा हुई। उस सभा में जब एक ब्राह्मण ने एक श्लोक पढ़ा, तो सातवाहन ने उसका अर्थ बता दिया। सभासदों ने हर्षध्वनि की। गुणाढ्य हार गया। अब वह संस्कृत, प्राकृत और देशीय भाषाओं में प्रतिज्ञा के अनुसार बातचीत न कर सकता था। मौनी होकर वह राजकार्य कैसे कर सकता था! इसलिए दुपहर के समय, जब सभा विसर्जित होनेवाली थी, राजा से संकेत करके विदा ली। उसके बाद दो शिष्यों को लेकर, तपस्या करने के लिए, वह विन्ध्या के अरण्यों में चला गया।

वहाँ उसको पिशाच दिखाई दिये। गुणाढ्य उन पिशाचों की भाषा सुनता

रहा। वह मौन छोड़कर उस पैशाची भाषा में बातचीत करने लगा।

इस अरण्य में एक बढ़ के पेड़ के नीचे पिशाचों का राजा काणभूति रहा करता था। गुणाढ्य इस काणभूति से मिला। पिशाचों की भाषा में ही उसने उससे कुशल प्रश्न पूछे। दोनों में स्नेह हो गया। काणभूति ने अपनी पैशाची भाषा में गुणाढ्य को सात कहानियाँ सुनाईं। गुणाढ्य ने उसी भाषा में, सात वर्षों में अपने रक्त से सात लाख ग्रन्थों में उनको लिखा। गुणाढ्य का शिष्य गुणदेव और नन्दिदेव ने

सलाह दी कि इन ग्रन्थों को सातवाहन महाराज को समर्पित करना अच्छा था। गुणाढ्य इसके लिए मान गया। उसने उन ग्रन्थों को अपने शिष्यों को देकर सातवाहन के पास भेजा पर वह स्वयं नगर के बाहर एक उद्यान में छुपा रहा।

गुणाढ्य के शिष्यों ने ग्रन्थों को राजा को दिया। राजा ने उन्हें देखकर कहा—"ग्रन्थ तो बहुत हैं। यह क्या भाषा है! ये लाल अक्षर क्या हैं! यह तो कोई बुरी कहानी मालूम होती है।"

शिष्य उस ग्रन्थ को गुरु के पास उद्यान में ले गये। जो कुछ बीता था, उसे बताया। गुणाढ्य लज्जित हुआ। वह अपने शिष्यों के साथ समीपवर्ती पर्वत पर गया। वहाँ उसने आग जलाई और अपने ग्रन्थ का एक एक पन्ना पढ़कर उसमें डालता गया। गुणाढ्य का ग्रन्थ सुनने आस पास के पशु पक्षी खाना पीना छोड़ छोड़कर वहाँ मँडराने लगे।

कुछ दिनों बाद सातवाहन अशक्त-सा हो गया। राजवैद्यों ने परीक्षा कर के बताया कि राजा जो शिकार का माँस खा रहा था, वह बलहीन था। खोज करने के बाद पता लगा कि शिकार के पशुओं के निर्बल हो जाने का कारण यह था कि वे खान पान छोड़कर गुणाढ्य की रचना सुन रहे थे।

उसी ग्रन्थ को जब गुणाढ्य ने भेजा था, तो उसने स्वीकार करने से इनकार कर दिया था, इसलिए वह पछताया और उसने गुणाढ्य के पास जाकर, उससे वह ग्रन्थ देने के लिए कहा। तब तक छः लाख ग्रन्थ जल चुके थे। एक लाख ग्रन्थ बाकी रह गये थे। यही बृहत कथा है। यह कथा अब भी प्रसिद्ध है।

प्रसिद्ध ऐतिहासिक प्रदेश :

"बूड़िया"

लेखक : हरेश गुलती, यमुना नगर (पंजाब)

पंजाब प्रान्त के अम्बाला ज़िले की तहसील जगाधरी में प्रसिद्ध "बूड़िया" ग्राम है। यह जगाधरी से ५ मील व अम्बाला से ३३ मील दूरी पर स्थित है।

सुरम्य जंगलों व बागों के मध्य स्थित यह ग्राम कभी बहुत ख्याति प्राप्त रहा है। कहा जाता है प्रसिद्ध मुगल बादशाह अकबर यहाँ शिकार या मनोरंजन के लिए आया करता था। जगत प्रसिद्ध विदूषक बीरबल यहीं का रहनेवाला था।

रेल की लाईन से दूर है, परन्तु सड़क द्वारा भिन्न-भिन्न भागों से जुड़ा है। पर्यटक इससे दो मील दूर भव्य स्थान पर स्थित 'राजा का किला' जो अब अजायब घर का रूप धर चुका है, देखने आते हैं। इसके निकट ही 'बावन द्वादशी' का मेला लगता है जहाँ दूर-दूर से भक्त आते हैं। मेले के समय लोग एक मन्दिर में इकट्ठे होते हैं, जिसके चारों तरफ़ तालाब है।

यहाँ पर मुगल काल के बने सुन्दर बुर्ज व छोटे-छोटे गोलाकार किले देखने को मिलते हैं, जो पतली ईंट के बने हैं और हमें मुगल-कालीन कला का ज्ञान कराते हैं। जंगल निकट होने के कारण स्वास्थ्य की दृष्टि से भी यह अच्छा स्थान है।

विचित्र ज्योतिष

एक दिन एक गरीब और उसकी पत्नी पेट पालने बगदाद नगर गये। उनको रोज काम की तालाश में गलियों में घूमता देख एक भद्रपुरुष ने पूछा—"क्यों तुम रोज यों गलियाँ छानते हो?"

"हुज़ूर हम मज़दूरी के लिए फिर रहे हैं।" गरीब ने कहा।

"क्यों नहीं कुछ पेशा करते?" भद्रपुरुष ने सुझाया।

"क्या करूँ, मुझे तो कोई पेशा आता नहीं है।" गरीब ने कहा।

"अगर ऐसी बात है, तो कुल्हाड़ी लेकर चुँगी घर के पास जाओ। वहाँ लकड़ियाँ चीरकर दो चार पैसे कमाओ।" भद्रपुरुष ने कहा।

गरीब अगले दिन कुल्हाड़ी लेकर चुँगी घर के पास गया। वहाँ लकड़ियाँ चीरकर जो थोड़ा बहुत कमाता, उससे अपना और अपने परिवार का गुज़ारा करता।

एक दिन गरीब की पत्नी ने पति से कहा—"मुझे स्नानशाला में जाकर नहाना है। जरा थोड़ा पैसा तो दो।"

गरीब ने पैसे दे दिये। पत्नी स्नानशाला गई। वह बड़े-बड़े घरों की स्त्रियाँ थीं। रईस वह अपनी गरीबी देखकर बड़ी शर्मिन्दा हुई।

इतने में गरीब की पत्नी ने सुना—"राज-ज्योतिषी की पत्नी" उसने भी औरों की तरह सिर उठाकर देखा। उस समय राज-ज्योतिषी की पत्नी बड़ी शान से स्नानशाला में आ रही थी।

"छी, मेरी ज़िन्दगी भी क्या ज़िन्दगी है, अगर पत्नी ही होना है तो ज्योतिषी की पत्नी होना है।" सोचती गरीब की पत्नी स्नान करके घर गई।

लीला भटनागर

पति के घर आते ही उसने पूछा—"तुम राज-ज्योतिषी होते हो, या मुझे छोड़कर जाते हो ? तय कर लो।"

गरीब चकित रह गया। "मैं तो पढ़ना लिखना भी नहीं जानता। मैं राज-ज्योतिषी कैसे बनूँगा ?" उसने कहा।

"यह सब मुझे न बता। राज-ज्योतिषी जब तक नहीं हो जाते तब तक तुम अपना मुँह मुझे न दिखाओ।" पत्नी ने झुंझलाते हुए कहा।

बिचारा गरीब क्या करता ? गरीब कागज़, कलम और दवात लेकर स्नानशाला गया। दरवाज़े पर, ताकि सब देख सकें, वह "यन्त्रों" के चित्र घसीटने लगा।

थोड़ी देर बाद, खलीफ़ा स्वयं स्नानशाला आया। सब को उसको घेर घारकर, इधर उधर की चीज़ें माँगता देख गरीब ने दरवाज़े के पास से कहा—"क्या हुजूर, एक बार इस तरफ़ आयेंगे ?" न मालूम खलीफ़ा ने भी क्या सोचा कि वह स्नानशाला के दरवाज़े के पास आया। उसी समय स्नानशाला की छत गिर गई।

"अगर थोड़ी देर और होती तो खलीफ़ा की जान चली जाती। वह ज्योतिषी तो बहुत बड़ा आदमी मालूम होता है। नहीं तो खलीफ़ा पर बड़ी आपत्ति आती।" सब ने गरीब की खूब प्रशंसा की। वहाँ जमा हुए लोगों के पास जो कुछ था, उन्होंने गरीब को वह सब ईनाम में दे दिया। खलीफ़ा का तो कहना ही क्या !

उन ईनामों को लेकर गरीब घर गया "देखो, ईनामों को" उसने सन्तोष से पत्नी से कहा।

"किसे चाहिये ये ईनाम ? तुम राज-ज्योतिषी बने कि नहीं ? यह पहिले बताओ।" पत्नी ने कहा।
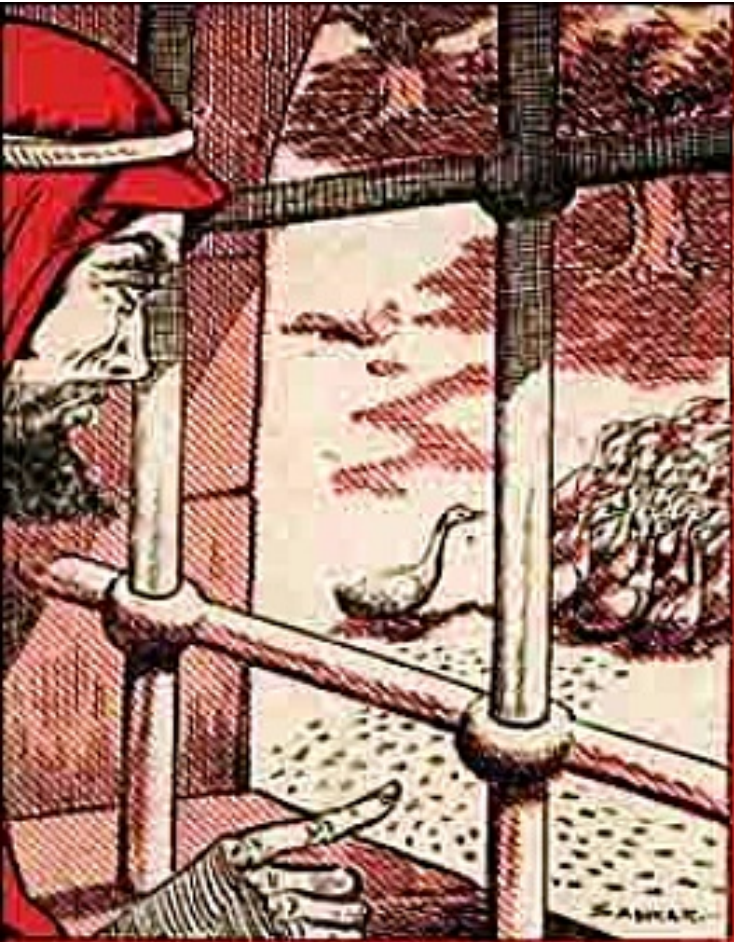
गरीब ने लम्बा-सा मुँह करके कहा—"अभी तो नहीं।"

"तो तुम अपना मुँह मुझे न दिखाओ।" पत्नी ने कहा। गरीब ने जाकर फिर स्नानशाला के पास धरना दिया।

उस दिन खलीफ़ा की हीरे की अंगूठी खो गई थी, बहुत खोजने पर भी नहीं मिल रही थी। इतने में किसी ने कहा—"स्नानशाला के पास जो ज्योतिषी बैठता है, वह बड़ा तेज है। उसने खलीफ़ा की जान भी बचाई थी। इस चोरी के बारे में भी वही बता सकता है।"

फिर क्या था ? खलीफ़ा ने उस गरीब को बुलवाया और चोर के बारे में बताने के लिए कहा।

गरीब को न सूझा कि क्या कहे। उसने कहा—"हुजूर, इसके लिए कुछ वक्त चाहिये।"

"तो दो रोज का वक्त ले लो।" खलीफ़ा ने कहा। इस बीच गरीब ने बगदाद छोड़कर भाग जाना चाहा। परन्तु खलीफ़ा के आदमियों ने उसे राजमहल के एक कमरे में बन्द कर दिया और वहीं उसको खाने पीने की चीज़ें लाकर दीं।

गरीब की तो अक्ल ही जाती रही। वह रोज खिड़की के पास खड़ा रहता और बाहर के मैदान की ओर देखता रहता। उस मैदान में बड़ी बड़ी बत्तखें थीं। उनमें से एक लंगड़ी थी। गरीब को वह बीमार भी लगी। गरीब ने उसे देखकर कहा—"बिचारी यह भी मेरी तरह लगती है।" वह दो दिन उसे ही देखता रह गया।

तीसरे दिन खलीफ़ा के आदमियों ने आकर दरवाज़े खोले। गरीब को खलीफ़ा के पास ले गये।

"मेरी अंगूठी कहाँ है ? उसके बारे में तुम कुछ मालूम कर सके?" खलीफ़ा ने पूछा।

"हुजूर, माफ़ करें। मैं दोनों दिन, सिवाय एक लंगड़ी बत्तख के कुछ न देख सका।" गरीब ने कहा।

वह अभी "लंगड़ी बत्तख" कह ही रहा था कि खलीफ़ा के आदमी भागे भागे गये। उन्होंने लंगड़ी बत्तख को पकड़ लिया। जब उसका पेट काटा गया, तो उसके पेट में हीरे की अंगूठी थी।

इस अंगूठी को एक दासी ने चुरा लिया था। जब वह इसे कहीं और न छुपा सकी, तो उसने उसे बत्तख को खिला दिया और निशानी के लिए उसने उसकी टाँग तोड़ दी।

गरीब के "ज्योतिष" से खुश होकर खलीफ़ा ने बहुत-से ईनाम दिये। उन्हें लेकर गरीब घर गया, उसने पत्नी से कहा—"इस बार देखो, कैसे कैसे ईनाम लाया हूँ !"

"मुझे ईनामों के बारे में न बताओ। राज-ज्योतिषी बने कि नहीं ?" पत्नी ने पूछा।

"नहीं तो...." पति ने कहा।

"तो जाओ, मुझे अपना मुँह न दिखाओ।" पत्नी ने कहा।

गरीब ज़िन्दगी से ऊब उठा। उसने सीधे खलीफ़ा से जाकर कह देना चाहा। खलीफ़ा दूसरी मंज़िल पर बैठा था। द्वारपालक उसको वहाँ ले गये।

"मैं हुजूर से एक बात कहने आया हूँ, अगर आपकी मेहरबानी हुई तो मैं राज-ज्योतिषी के पद पर काम करना चाहता हूँ।" गरीब ने कहा।

उस समय उसने एक नौकर को एक थैले में कुछ लिए हुए खलीफ़ा के पास आते देखा।

"अगर तुम यह बता सके कि यह आनेवाला क्या ला रहा है, तो तुम्हें राज ज्योतिषी बना दूँगा।" खलीफ़ा ने कहा।

गरीब का दिल थम-सा गया।

"हुजूर माफ़ करें। आपको स्नान शाला से बाहर आने के लिए कहा और उसी समय स्नानशाला की छत गिर गई। मैंने कहा कि लंगड़ी बतख दिखाई दी थी और उसके पेट में हीरे की अंगूठी निकली। भले ही खरगोश बड़ा अक़्लमन्द हो पर वह शिकारी के जाल से बच नहीं सकता।" गरीब ने कहा।

इतने में नौकर पास आया उसने थैले में से एक खरगोश निकालकर खलीफ़ा को दिखाया। "शबाश, शबाश, तुम से बड़ा ज्योतिषी इस संसार में नहीं है। तुम्हें अब से राज-ज्योतिषी नियुक्त करता हूँ।" खलीफ़ा ने कहा।

गरीब की अब पाँचों अंगुली घी में थीं। उसकी पत्नी के आनन्द की सीमा न थी।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

फ़रवरी १९६१ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, दिसम्बर '६० के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता,
चन्दामामा प्रकाशन,
वडपलनी, मद्रास - २६.

दिसम्बर – प्रतियोगिता – फल

दिसम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : घन-घमण्ड नभ गरजत घोरा !
दूसरा फ़ोटो : अति-प्रमुदित-मन नाचत मोरा !!

प्रेषक : भरतसिंह चौहान;
किंग जार्जस् पब्लिक स्कूल, बेंगलौर - १

१. अविनाश पोड़े, भोपाल

चन्दामामा के संस्थापक का नाम बताइये।

श्री बी. नागिरेड्डी और श्री चक्रपाणी।

२. किरणबादा पंढारी, मोतिहारी (बिहार)

क्या आपने कभी कोई ऐसी कहानी भी प्रकाशित की है जो बिल्कुल सत्य हो?

कई चीज़ें छापी हैं, जो सत्य हैं, जैसे यात्रा वृत्तान्त। पर वे कहानी नहीं हैं। हम कहानियाँ प्रकाशित करते हैं और उनमें कितनी सचाई हो सकती है, आप अनुमान कर सकते हैं।

३. खेलसिंह पंजाबी, बिलासपुर

चन्दामामा प्रत्येक माह के कितनी तारीख को निकलता है?

करीब दस तारीख तक।

चन्दामामा को बच्चे इतना पसन्द क्यों करते हैं?

हम कैसे अपने मुँह अपनी तारीफ़ करें! आप क्यों पसन्द करते हैं? शायद और भी आप ही की तरह पसन्द करते होंगे।

४. केशव प्रसाद पाण्डे, पोटरसेन्ठ, चान्दमेरा

चन्दामामा की कितनी प्रतियाँ प्रति माह निकलती हैं?

हिन्दी की ही सत्तर हज़ार से ऊपर।

५. काली प्रसाद, दिल्ली

"चन्दामामा" में राणा प्रताप, औरंगज़ेब और झाँसी की रानी की कहानी अभी तक नहीं पढ़ी!

"राणा प्रताप" के बारे में तो इसी अंक में ही पढ़िये। औरों के बारे में भी पढ़ेंगे। थोड़ा सब्र कीजिये।

६. चन्द्रकान्त मिश्र, कलकत्ता-६

क्या आपने चन्दामामा में कभी "एलिस अद्‌भुत देश में" की कथा छाप चुके हैं?

अभी तक, तो नहीं।

७. इन्द्रजितसिंह, लुधियाना

क्या आप "गलिवर की यात्रायें" की तरह महाभारत की कथा सचित्र छापने का कष्ट करेंगे?

महाभारत सचित्र रूप से छप ही रहा है, अभी तक तो इसको एक और रूप में प्रकाशित करने की योजना नहीं है।

८. अनिल खोसला, पाटियाला

चन्दामामा में जो कहानी "अग्निद्वीप" चल रही है, इसकी किताब कब तक मिल सकेगी?

अभी तो छप ही रही है—इसके खतम होने के बाद ही हम इस बारे में और जानकारी दे सकेंगे।

९. श्री जगदीशसिंह गौर, कलकत्ता

प्रसिद्ध ऐतिहासिक प्रदेश के अन्तर्गत लेखों के लिए पारिश्रमिक मिलता है या नहीं?

मिलता है।

१०. पवनकुमारवर्मा, दिल्ली

जो आप मराठी और तेलुगु आदि की भाषाओं में चन्दामामा प्रकाशित करते हैं, क्या उनका नाम चन्दामामा ही रखा है?

तेलुगु में तो वही है। मराठी में इसको चांदोबा कहा गया है। तमिल में अम्बुलिमामा और भाषाओं में यही है।

चित्र-कथा

दास और वास के खेलने की जगह के पास ही एक मेंढ़ा चरा करता। वह रोज उनका पीछा करता। मेंढ़े चरानेवाले ने कहा—"अरे, वह मेंढ़ा तो ऐसा है कि शेर से भी जा टकरायेगा। तुम्हारी बात ही क्या है।" दास और वास ने "टाइगर" को लकीरदार तौलिया ओढ़ाया। मुख पर शेर का मुखौटा बाँधा—उसे मेंढ़ की ओर दौड़ाया। "टाइगर" को पास आता देख मेंढ़ा भागने लगा। उसका चरानेवाला उसके पीछे भागा, दास और वास हँसे।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by B. VENUGOPAL REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

Photo by P. R. Shinde

पुरस्कृत परिचयोक्ति

अति प्रमुदित-मन नाचत मोरा !!

प्रेषक : भरतसिंह चौहान - बंगलौर

मार्कोपोलो की साहसिक यात्रायें